मान्य बहन कुमारी लज्जावती को

मेरे रिक्त हृदय-दीपक में तुमने भर कर स्नेह पुनीत,
आग लगा दी, हुआ प्रकाशित मेरा भूला हुआ अतीत।
हाय छू दिये, छिन्न-भिन्न वीणा के तुमने तार अजान,
जब वे बजने लगे, बहन, तो, फेरो नहीं इधर से कान।

तुम बोलीं गाओ, मै गाने बैठ गया चुपचाप अजान।
तान छिड़ी, वह पड़ी हृदय से, मानों तुम ही स्नेह-निधान!
कोयल-सा मै कूक उठा, पर, अर्थ न जाना मैं क्या बोला।
जान न पाया मेरे कर्कश स्वर मे तुमने कब मधु घोला।

बहन, छिपा ले इस चिड़िया को, पड़े इधर जग की न निगाह।
जगत् व्याध है, कभी मारकर इसको खा जावेगा, आह।
उसके हृदय नहीं जिसको हो मधुर गीत सुनने की चाह!
जिससे पेट भरे उसको ही खाकर वह कहता है, 'वाह।'

इस दुनियाँ में दिखते है जो, हरे-भरे प्यारे उद्यान,
उनमे वधिक बसेरा करते अपने जाल मनोहर तान।
किस तरु पर मै जाकर बैठूँ जहाँ न पहुँचे जग के बाण।
बहन, छिपा लो स्नेहल अंचल की छाया मे मेरे प्राण।

बहन, मान आदेश तुम्हारा जग को मैंने गान सुनाया।
हुआ तुम्हें संतोष, मान लूँगा मैंने सब कुछ भर पाया।
अब न जगत् की हाट-बाट मे तुम गीतों का मोल कराना।
मुझे सिखा दो जग के सुख-दुख की सीमा से ऊपर गाना।

श्रावणी-पूर्णिमा
१६६१

हरि

पात्र-सूची

पुरुष

विक्रमादित्य महाराणा संग्रामसिंह (साँगा) और महारानी जवाहर-
बाई के पुत्र, मेवाड़ के महाराणा

उदयसिंह महाराणा संग्रामसिंह और महारानी कर्मवती का पुत्र

हुमायूँ दिल्ली का बादशाह

बहादुरशाह गुजरात का बादशाह

बाघसिंह महाराणा विक्रमादित्य के चाचा, प्रतापगढ के राजा

चाँदखाँ बहादुरशाह का भाई

सुल्लूखाँ मालवा का सूबेदार

शाहशेख औलिया बहादुरशाह के उस्ताद (धर्मगुरु)

भीलराज मेवाड़ के भीलों का सरदार

विजयसिंह महाराणा विक्रमादित्य के बड़े भाई स्वर्गीय महाराणा
रत्नसिंह का पोता

धनदास मेवाड़ का एक सेठ

मौजीराम धनदास का पुत्र

तातारखाँ और हिंदूबेग हुमायूँ के सेनापति

नुनो दे कुन्हा पुर्तगीज़ गवर्नर

अर्जुनसिंह बूँदी का राजकुमार, कर्मवती का भाई

स्त्री

कर्मवती स्वर्गीय महाराणा साँगा की पत्नी, उदयसिंह की माँ

जवाहरबाई — स्वर्गीय महाराणा साँगा की पत्नी, विक्रमादित्य की माँ

श्यामा भील-पुत्री, जिसका विवाह महाराणा विक्रमादित्य के बड़े
भाई, स्व० महाराणा रत्नसिंह के जेठे पुत्र से हुआ था,
विजयसिंह की माँ

माया धनदास की पत्नी

चारणी मेवाड़ की गौरव-गाथा गाने वाली

रक्षा-बंधन

पहला अंक

पहला दृश्य

स्थान चित्तौड़ के महाराणा विक्रमादित्य का भवन।

समय रात्रि का प्रथम चतुर्थांश।

[महाराणा विक्रमादित्य का सिंहासन खाली है। सेठ धनदास और अन्य मुसाहिब बैठे बात-चीत कर रहे हैं]

एक मुसाहिब बस युद्ध ही युद्ध! मेवाड़ियों को दिन-रात, सोते-जागते, खाते-पीते, एक ही बात। युद्ध!

धनदास सीसोदिया-वंश की पीढ़ियाँ युद्ध करते बीत गईं, मेवाड़ का इतिहास रक्त से रँग गया, पर मिला क्या? महाराणा कुंभा, महाराणा सांगा, वीर पृथ्वीराज, महाराणा रत्नसिंह आदि सभी को जल्द से जल्द स्वर्ग की सीढ़ी पर कदम रखना पड़ा! भला, मरने की ऐसी जल्दी क्यों।

दूसरा मुसाहिब देश की नाक रखने के लिए?

धन० ह-हा-हा! देश की नाक! खूब! देश के भी नाक होती है?

पहला मुसाहिब हो भी, तो क्या वह इतनी बढ़िया चीज़ है, कि उसके पीछे, जान गँवाई जाय?

धन० बहुत ठीक ! मेरा विशाल उदर साक्षी है । मुझे बुद्धि में लंबोदर के समान समझा जाता है । मैं कहता हूँ ··

(महाराणा विक्रमादित्य का प्रवेश, सब खड़े होकर अभिवादन करते हैं। महाराणा अपने आसन पर बैठ जाते हैं)

विक्रम-(हँसते हुए) कौन-सा शास्त्र सुना रहे थे, धनदास जी !

धन० अन्नदाता ! मैं कह रहा था कि जिस वनिए ने 'चमड़ी चली जाय, पर दमड़ी न जाय' वाली कहावत बनाई, वह वज्रमूर्ख था । चमड़ी बच रहेगी तो दमड़ी तो कौशल के साथ दुनियाँ से बहुत वसूल की जा सकती है ।

विक्रम आप तो बड़े राजनीतिज्ञ जान पड़ते हैं।

पहला मुसाहिब रावण से भी बड़े ?

धन० रावण ! अहह ! उस बेचारे का राजनीति से क्या संबध ? दस मस्तक होने से ही क्या कोई राजनीतिज्ञ हो जाता है। राजनीतिज्ञ होने के लिए विस्तृत और गंभीर पेट की आवश्यकता होती है, अखिल विश्व को उदरसात् करने की शक्ति उत्पन्न करनी होती है।

दूसरा मुसाहिब वाह सेठ जी ! आप भी विचित्र है और आपकी बातें भी ! पेट और राजनीति का क्या संबंध ?

धन० यही तो लोग जानते नहीं । अरे बड़ा पेट न हो तो गालियाँ; बदनामियाँ, अपमान और जूतियाँ और इन सब के साथ-साथ दुनियाँ भर की संपत्ति और ज़माने भर का प्रभुत्व कहाँ हज़म हो ? जो इन्हें हज़म नहीं कर सकता, उसका बाप भी सात पीढ़ियों तक सफल राजनीतिज्ञ नहीं हो सकता । असल में लोग राजनीति का अर्थ ही नही समझते !

पहला मुसाहिब अच्छा, तो आप ही कहिए आख़िर राज-नीति है क्या बला ?

धन० नग्न शब्दों में राजनीति का अर्थ है बहुरूपियापन। सफल राजनीतिज्ञ वही है, जो समय देख कर, नीति, राष्ट्रीयता, जाति, धर्म, सब कुछ बदल सके; जिसका अपना कोई सिद्धांत न हो; जो समय की गति के विरुद्ध सूखे सिद्धांतों से चिपके रहने की कट्टरता, संकीर्णता प्रकट न करे।

विक्रम बस बहुत हुआ! समाप्त करो अपना यह राज नीति-महाभाष्य! (मुसाहिब से) नर्तकी को बुलाओ, जिससे ज़रा मनोरंजन हो।

पहला मुसाहिब—(उठकर) जो आज्ञा। (प्रस्थान)

विक्रम क्यों सेठ धनदास जी, यह कैसे हो सकता है कि मेवाड़ के राज-महल से नस-नस को स्फुरित करने वाले मलय-समीरण को निर्वासित कर दिया जाय ?

धन० निस्सदेह, अन्नदाता! दक्षिण-पवन तो तपोवन मे भी जाने से न चूका था। गौतम ऋषि के आश्रम मे एक दिन वसंत, कंदर्प, चद्र और इन्द्र ने जो उत्पात मचाया था वह किसे अविदित है? राजा से ब्रह्मर्षि बन जाने वाले विश्वामित्र को भी तो दक्षिण-पवन के एक झोंके से सन्निपात हो गया था।

दूसरा मुसाहिब नही महाराज, उसे तो अश्वमेध के घोड़े की तरह सरपट छोड़ देना चाहिए।

धन० फिर स्वयं सुरेश ने नरेशों को आज्ञा दे रखी है, कि उनके दरबार में पुष्पधनुर्धर अनंग, रतिरानी, मेनका, रंभा,

उर्वशी सभी का नित्य नवीन अवतार हो। अहा ! वह लो मेवाड़ी मेनका तो आ ही पहुँची।

(नर्तकी आती है और अभिवादन करती है)

विक्रम सुन्दरी, बैठो। कोई सुन्दर-सा गान सुनने की इच्छा है। (कुछ उत्तेजित होकर) सुनाओ न कोई मद-भरा-गान।

मुसाहिब साथ-साथ नृत्य भी चले तो क्या बात है।

(नर्तकी नाचती है और गाती है)

गान

आओ हँस लें, और हँसा लें !

ज्योत्स्ना-ज्योतित जग-मग रात,

तारे गिनने में हे तात !

बीत न जाने दो अज्ञात,

इन आँखों की प्यास बुझा लें !

आओ हँस लें और हँसा लें !

सागर के उर में तूफ़ान

उठता है, तो मानव-प्राण

कैसे जीवन के अरमान

भीतर ही चुपचाप छुपा लें !

आओ हँस लें और हँसा लें !

(महाराणा विक्रमादित्य के चाचा बाघ सिंह, भीलराज और कुछ सामंतों का प्रवेश। सब खड़े हो जाते हैं)

बाघसिंह (चौंक कर) शिव ! शिव ! मैं यह क्या देख रहा हूँ ! धिक्कार है, महाराणा ! बाप्पा रावल, महाराणा समरसिंह, वीर हम्मीर आदि आज स्वर्ग में क्या कहते होंगे ?

विक्रम ! वाप्पा रावल द्वारा निर्मित एकलिंगजी के मंदिर में मदन-दहन करने वाले प्रलयंकर शंकर की मूर्ति रो रही है। आज तुमने उन्हीं के वंशज तुमने शिव की शरण छोड़ कर कंदर्प के चरण पकड़े है।

धनदास ये महाराणा हैं। इन्हें अधिकार...... .

बाघसिंह (झपट कर धनदास के लात जमाते हैं, वह डर कर गिरता-पड़ता भाग जाता है) तुम ही तो हो सारे अनर्थ की जड़ ! दूर हो, नारकी कुत्तों ! (मुसाहिब घबराते हैं) और नर्तकी ! जाओ यहाँ से। इसी क्षण ! मेवाड़ के राज-महल में तुम्हारा कोई काम नहीं, राजर्षियों के रक्त से सिंची हुई भूमि पर तुम्हारा कोई स्थान नहीं।

(नर्तकी का प्रस्थान)

विक्रम चाचाजी, आपने मेरा अपमान !

बाघसिंह ऐसा पतन ! महाराणा के सम्मान का एक नर्तकी के मान से गठ-बंधन ! मेवाड़ की इज्ज़त धूल मे न मिलाओ, विक्रम ! देखो, आँखे खोल कर देखो। उस कराला देवी के मंदिर की तरफ देखो। वे रूठ कर जा रही हैं। वे दैत्य-दल-सहारिणी, तड़ित्-असि-धारिणी, मुंडों की माला पहन कर श्मशान पर तांडव करने वाली, जिनके आशीर्वाद से मेवाड़ के वीर मरण को वरण करने जाते है, देखो, रूठ कर जा रही है। विक्रम ! तुमने उनके स्थान पर रति की आराधना आरंभ की है। उन्हे मनाओ, मेरे लाल, उन्हे मनाओ !

(विक्रम चुप रहते हैं)

भीलराज महाराणा ! मैंने अपने अँगूठे के खून से आपका

राज-तिलक क्या इसीलिए किया था ? मेवाड़ की प्रजा को निर्लज्ज विलासिता का नग्न नृत्य देखने का अभ्यास नहीं है। जो वीर नागरिक राजाओं के सिर पर मुकुट रख सकते हैं, वे उतार भी सकते हैं।

विक्रम　तुम्हें भी इतना साहस। तुम नीच भील......,

(सहसा जवाहरबाई का प्रवेश)

जवाहर　चुप रहो, लड़के। मैने सब सुना है। पश्चात्ताप की आग से मेरा हृदय जल रहा है। जिन्हें तुमने अभी नीच कहा है, वे वसुंधरा के लिए भगवान के आशीर्वाद हैं वरदान है। भीलराज का अपमान कर तुमने मेवाड़ पर देवताओं के अभिशाप को आमंत्रित किया है ! तुम्हारे मुँह से ऐसी घृणित बात कैसे निकली ?

भीलराज　नहीं, माताजी। हम वास्तव में नीच हैं क्योंकि हमारे पूर्व-पुरुष ने राजमुकुट अपने मस्तक पर न रख कर आपके आदि-पुरुष बाप्पा रावल के मस्तक पर रख दिया था। हम नीच है, महाराणा, इसलिए कि हमने महाराणा और मेवाड़ की मान-रक्षा के लिए अपनी पीढ़ियों का खून मेवाड़ की भूमि में सींचा है। माताजी, आप इन्हे कहने दीजिए भील नीच है।

जवाहर०　विक्रम।

विक्रम　माँ।

(कर्मवती और बालक उदयसिंह का प्रवेश)

जवाहर　बेटा, तुमने भीषण अपराध किया है। जो राजा अपने आप से अपनी प्रजा को नीच समझता है, उसे राज-

सिंहासन पर बैठने का अधिकार नहीं। सौंप दो यह प्रजा की धरोहर प्रजा को। उतारो मुकुट। इसी क्षण। यह माँ की आज्ञा है।

(विक्रमादित्य मुकुट उतारते हैं)

बाघसिंह उदयसिंह जी भी तो महाराणा सांगा के पुत्र हैं, वे यहाँ उपस्थित हैं, उनका इस राज-मुकुट पर अधिकार है।

जवाहर निश्चय ही। विक्रम! रख दो, बेटा, हँसते-हँसते यह राज-मुकुट उदयसिंह जी के मस्तक पर।

(विक्रम आगे बढ़ते हैं)

कर्मवती ठहरो! राजमाता तुम धन्य हो। तुमने महाराणा संग्रामसिंह की पत्नी के योग्य बात कही है। धन्य हो विक्रम। तुमने अपने पिता राणा संग्रामसिंह जी के समान ही त्याग का परिचय दिया है। वे भी एक रोज अपने चरणों से राज-मुकुट को ठुकरा कर चले गये थे। भीलों की भेड़ें चरा कर उन्होंने जीवन-निर्वाह किया था। किंतु, उदयसिंह भी तो उन्हीं सांगा जी का पुत्र है। यदि वह गृह-कलह की आग प्रज्वलित करने वाला सिद्ध हुआ, तो मैं उसका गला घोंट दूँगी। वह अभी बच्चा है, जीजी, उसे खेलने को तलवार चाहिए राज-मुकुट नहीं।

बाघसिंह किंतु प्रजा इस सिंहासन का उत्तराधिकारी तो, उदयसिंह को.

कर्मवती भूलते हो, बाघसिंह जी। इस राज-मुकुट को मस्तक पर रखने का अधिकारी वही है, जिसकी भुजाओं में वैरी से लड़ने का बल है। जब तक हम अपने व्यक्तित्व को,

सुख-दुःख और मानापमान को, देश के मानापमान में निमग्न न कर देंगे, तब तक उसके गौरव की रक्षा असंभव है। तब तक हम मनुष्य कहलाने योग्य नहीं हो सकते। जिस समय देश पर विपत्ति के बादल घिरे हुए हैं; बिजली कड़क रही है, शत्रु पैशाचिक अट्टहास कर रहे हैं, उस समय पृथक्-पृथक् व्यक्तियों, जातियों और वंशों के मानापमान और अधिकारों की चर्चा कैसी! यह घोर पाप है, बाघसिंह जी! इस समय वीरों को केवल एक अधिकार याद रखना चाहिए, और वह है-देश पर जान न्योछावर करना। शेष सभी पर परदा डाल दो, शेष सभी को पाताल में गाड़ दो।

भीलराज धन्य हो, महाराणा संग्रामसिंह की वीर पत्नी, तुम धन्य हो! तुम्हें देखकर संसार यह जान सकता है कि मेवाड़ क्यों अजेय है।

कर्मवती और सुनो विक्रमजी! तुम भी याद रखो। वीरवर महाराणा कुंभा ने मालवा और गुजरात के बादशाहों पर विजय पाने की स्मृति में गौरीशंकर की चोटी के समान ऊँचा वह जो विजय-स्तंभ खड़ा किया है, उसकी एक ईंट भी तुम्हारे जीते जी नीचे न खिसकने पावे। और यह राज-मुकुट राजर्षियों, त्यागियों और बलिदान-पथ के यात्रियों के लिए है, स्थिति-पालक और अकर्मण्य विलासियों के लिए नहीं, लाओ मुझे दो यह।

(मुकुट लेकर विक्रम को पहना देती हैं)

विक्रम (घुटने टेककर) मैं पापी हूँ, नराधम हूँ। महाराणा संग्रामसिंह आकाश के उज्ज्वल नक्षत्र थे। आप में उन्हीं की

आत्मा का तेज है। आज आपने मेरे हृदय के अंधकार को परास्त करके भगा दिया है। अपनी चरण-रज दीजिए, उससे मुझे बल मिलेगा। आपके पुण्य-प्रताप से आपके इस कपूत विक्रम में नई प्राण-प्रतिष्ठा होगी।

(कर्मवती के चरण छूता है)

कर्मवती—यशस्वी हो, बेटा, मेवाड़ की सम्मान-रक्षा के लिए सर्वस्व अर्पण करने की शक्ति संचित करो।

विक्रम (जवाहर बाई से) माँ, तुम मुझे आशीर्वाद दो। मुझे शक्ति दो कि मैं अपने आलस्य और कायरता पर विजय पा सकूँ। भगवान् शंकर! भगवती काली! मुझे साहस दो, मैं मेवाड़ की रक्त-ध्वजा को सँभाल सकूँ!

कर्मवती मेवाड़ के महाराणा की जय!

सब मेवाड़ के महाराणा की जय!

जवाहर चलो वत्स! इस प्रमोद-भवन पर ताला डाल कर वीर-मन्दिर के पुजारी बनो! (सब का प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

दूसरा दृश्य

स्थान मेवाड़ के वन की एक पगडंडी

समय प्रभात

[श्यामा खड़ी गा रही है]

प्रेम-पंथ पर दुख ही दुख है,
प्रेम उन्हीं का जीवन-धन है,
जिन की सुख से चिर-अनबन है।
उन पगलों का पागलपन है,

जिनसे सारा विश्व विमुख है!
प्रेम-पंथ पर दुख ही दुख है।

ऊपर अंतहीन अंबर है,
नीचे तीर-रहित सागर है,
बे-पतवार तरी जर्जर है,
जिसकी ओर पवन का रुख है!
प्रेम-पंथ पर दुख ही दुख है।

प्राणों में होलिका-दहन है,
आँखों में सावन प्रतिक्षण है,
यह कैसा अद्भुत जीवन है?
जिसमें रोने मे ही सुख है!
प्रेम-पंथ पर दुख ही दुख है!

श्यामा ऐसा ही लाल-लाल खूनी प्रभात वह था, जिसमें मेरे जीवन का सूर्य सदा के लिए अस्त हो गया। देश-भक्ति के अंध उन्माद ने, न्याय के निष्ठुर अभिमान ने एक दिल की हरी भरी बस्ती को जलता हुआ मरु-प्रदेश बना दिया। इच्छा होती है, चोट खाई हुई नागिन की भाँति फुफकार कर संपूर्ण मेवाड़ को डस लूँ।

(कुछ दूर से गाने की आवाज़ आती है, जो प्रति-
क्षण निकटतर होती जा रही है)

धन्य-धन्य मेवाड़ महान।
हिमगिरि सा उन्नत यह मस्तक अखिल विश्व का है अभिमान।
सदियों से चढ़ते आए हैं, तुझ पर लक्ष लक्ष बलिदान।
लोहू की लहरों में चलता तेरे गौरव का जलयान।

बाप्पा रावल, समरसिंह जी, भीमसिंह, चूड़ा बलवान,
वीर हमीर, कुंभजी, साँगा, रत्नसिंह वीरों के प्राण,
इस मेवाड़ी राजवंश पर किसे नहीं होगा अभिमान ?
हे मेवाड़ ! हुए हैं तुझ पर गोरा-बादल से बलिदान !
देवि पद्मिनी का जौहर की ज्वाला में जल देना जान !
हे मेवाड़, कहानी तेरी पागल कर देती है प्राण !
धन्य-धन्य मेवाड़ महान !

(गाते हुए चारणी का प्रवेश)

श्यामा तुम कौन हो ? तुम्हारे गीत से मेरे विश्वास को धक्का लगा है; मेवाड़ के राजवश के प्रति मेरे हृदय में जो घृणा है, उसे आघात पहुँचा है।

चारणी मैं चारणी हूँ !

श्यामा आह, चारण और चारणी ! ये मनुष्यता के लिये अभिशाप हैं शांति को भस्मसात् करने वाले दावानल हैं, प्रेम के कुसुम को कुचल डालने वाले उन्मत्त पशु हैं, देशाभिमान, राष्ट्रीयता, जातीयता, वंश-गौरव, और न जाने किस-किस कृत्रिम भावना का नशा पिला कर मनुष्यता को रणोन्मत्त कर रक्त की नदियाँ प्रवाहित कराने वाले पिशाच हैं। चारणी ! तुम मेरी आँखों के आगे से हट जाओ।

चारणी चारणियाँ हटना नहीं जानतीं, बहन ! वे अंततम में प्रवेश कर आत्मा पर पड़ी हुई राख को हटाती हैं। तुम बड़ी दुखिया जान पड़ती हो। तुम कौन हो ? यदि कष्ट न हो तो मुझे भी अपने दुःख में भाग लेने दो।

श्यामा क्या करोगी मेरा परिचय पूछ कर ? मेरा भूत

विस्मृति की धूल में दब कर खो गया है, मेरा वर्तमान और भविष्य स्वगत भाषण की भाँति मौन है। मत पूछो चारणी, मैं कौन हूँ !

चारणी—बताओ, बहन ! बताओ।

श्यामा सुनो ! मैं हूँ डाल से तोड़ी हुई, पैरों से रौंदी हुई कलिका। मै हूँ मूर्च्छित हाहाकार। मैं हूँ ऊपर से बंद किंतु भीतर चिर-प्रज्वलित ज्वालामुखी। मेरा जीवन है सूखी सरिता, उजड़ा हुआ उपवन, ऊसर खेत, पतझड़ का पेड़। मेरे जीवन में भी एक दिन वसंत आया था; किंतु मेवाड़ के राजवंश⋯ ⋯

चारणी मेवाड़ के राजवंश से तुम्हारा क्या संबंध है ?

श्यामा वही जो चंद्रमा का कलंक से, आत्मा का पाप से ! एक दिन उन्होंने मुझे प्यार किया था, समुद्र की तरह उमड़ कर मुझे अपनी लहरों में लीन किया था। किंतु, दूसरे ही क्षण मैं सूने बालू के तट पर पड़ी कराह रही थी।

चारणी अधिक पहेली न बुझाओ, बहन ! साफ़⋯ ⋯

श्यामा चुप रहो, चारणी ! (कुछ रुक कर) अच्छा सुनो ! मेरा भी विवाह हुआ था। ऐसा विचित्र, जैसा किसी का न हुआ होगा।

चारणी—कैसा विचित्र ?

श्यामा एक ही रात में मेरा विवाह हो गया, सुहागरात भी हो गई, और सुहाग लुट भी गया। जानती हो क्यों ? मेवाड़ के महाराणा की एक सनक के कारण।

चारणी तो तुम श्यामा भीलनी⋯⋯⋯

श्यामा श्यामा भीलनी नहीं, मेवाड़ की कुल-वधू कहो !

जब मैं कुमारी थी, स्वर्गीय महाराणा रत्नसिंह के एकमात्र पुत्र मेरी रूप-ज्वाला के पतंगे बनने आए थे। वे जल मरे और मुझे तिल-तिल जलने को छोड़ गए। मालवा और गुजरात के बादशाहों से युद्ध करने को जाने के लिए कराला देवी के मंदिर में मेवाड़ के समस्त योद्धाओं को महाराणा रत्नसिंह ने बुलाया था। बेचारे कुमार नियत समय पर मेरे बाहु-पाश से छूट कर न जा सके। केवल कुछ क्षणों का विलंब भी महाराणा को सह्य न हुआ।

चारणी मैं सब समझ गई, देवि! उन्हें देर से आने के अपराध में मृत्यु-दंड मिला था। उसी समय तुम्हें लाया गया, वहीं विवाह हुआ, सुहागरात मनाई गई, और दूसरे दिन प्रातः काल उन्हें फाँसी दे दी गई।

श्यामा उस रात का आनन्द कितना गहन था, वह रात अमावस्या से भी काली; और शरत् पूर्णिमा से भी उज्ज्वल थी। वह जीवन और मरण की संधि थी। मेवाड़, तेरे न्याय को वह दंभ! हृदयहीन वीरता का वह अभिमान!

चारणी प्रेम हमारे स्वार्थ का सर्वनाश भले ही करे, पर यदि कर्तव्य के पथ पर, बलिदान के पथ पर जाने वाले को वह एक क्षण भी विलमा रखे, तो उसका गला घोटना ही पड़ेगा। वह प्रेम नहीं, वासना है, मोह है। कुमार महाराणा रत्नसिंह के एक मात्र पुत्र थे उनके जीवन के आधार, संपूर्ण स्नेह के अधिकारी, आशा, विश्वास और सांत्वना थे। मेवाड़ की ख़ातिर अपने हाथ से उन्होंने अपनी आत्मा के प्रकाश को फाँसी दे दी! क्या उनके पितृ-हृदय को इससे कुछ भी कष्ट

न हुआ होगा ? क्या कुमार की ममता पर केवल तुम्हारा ही अधिकार था ? बात यह थी, कि वे संयम करना जानते थे, हृदय को कुचल कर रखना जानते थे। उन्होंने कर्तव्य-पथ पर प्रेम का उत्सर्ग करना सीखा था। तुम्हीं सोचो बहन, रण-निमंत्रण पर किसी सैनिक का एक क्षण का भी विलंब मेवाड़ की कीर्ति के अनुकूल हो सकता है ? उस मेवाड़ की, जिसकी क्षत्राणियाँ अपने हाथ से अपने पतियों को देश की आन पर कुर्बान होने को सजा कर भेज देती हैं। हमारा देश पुत्र, पिता, भाई, प्रियतम, प्रियतमा, प्राण, सभी से बढ़ कर है। इस तथ्य को समझो।

(हाथ में नंगी तलवार लिये विजय का प्रवेश)

चारणी देश सर्वप्रथम है, सर्वोपरि है। यह कौन है ?

श्यामा उसी सुहाग-रात की शीतल आग; उस प्रथम और अंतिम सुख-स्वप्न का स्मृति-चिह्न।

चारणी मैं आशीर्वाद देती हूँ, बेटा। तुम मेवाड़ के राज-वंश की कीर्ति को बढ़ाओ। बाप्पा रावल के पवित्र रक्त के महत्त्व की रक्षा करो। स्वदेश पर सर्वस्व बलिदान करके हँसना सीखो।

श्यामा देवि ! आज तुम्हारे तेजस्वी शब्दों ने मुझे मोहनिद्रा से जगा दिया। तुम सच कहती हो, देश सर्वोपरि है, सर्वश्रेष्ठ है। हमारे दुःखों की क्षुद्र सरिताएँ उसके कष्ट और संकट के महासमुद्र में डूब जानी चाहिएँ। हाँ, बहन; गाओ तो। वही गान, एक बार फिर गाओ तो।

(चारणी गाती है, श्यामा और विजय दोहराते हैं)

धन्य धन्य मेवाड़ महान !

हिम-गिरि सा उन्नत यह मस्तक अखिल विश्व का है अभिमान।
(गाते-गाते सब का प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

तीसरा दृश्य

(संध्या के समय महाराणा विक्रमादित्य और चाँदखाँ राज-भवन की वाटिका में भ्रमण रहे हैं)

चाँदखाँ कितना खुशनुमा है आप का देश, महाराणा! आसमान से बातें करने वाले हरे-भरे पहाड़, कल कल, छुल-छुल करते हुए नाचते-कूदते जाने वाले झरने, समंदर से होड़ (स्पर्धा) करने वाले तालाब, बहिश्त के बगीचों को मात करने वाले बाग़, घने जंगल! कुदरत ने गोया (मानो) अपनी सारी दौलत यहीं बखेर दी है। यहाँ के सुबह ज़िंदगी का गीत गाते हुए आते हैं, और यहाँ की शाम हमदर्दी की तान छेड़ती हुई जाती है, यहाँ की रात राहत की सेज बिछाती हुई आती है। तभी तो दुनियाँ इसे लालच की निगाह से देखती है, तभी तो दूर-दूर के शाही लुटेरों का मुकाबिला करना पड़ता है।

विक्रम असल में चाँदखाँ जी, प्रकृति के ऐश्वर्य का उपभोग करने के लिए, ख़ून बहाने की ज़रा भी ज़रूरत नहीं! वह तो माँ की तरह, गरीब और अमीर सभी को अपना आँचल हिला कर बुलाती है, शाहज़ादा साहब! यह तो स्वार्थ का राक्षस है, जो हमारे हृदयों में बैठ कर, हम से एक-दूसरे के गले पर छुरी चलवाता है।

चाँदखाँ आप ठीक कहते हैं, महाराणा ! हम यह नहीं चाहते कि हमारे भाई भी खावें। हम तो यह चाहते हैं कि हमी खावें, और सारी दुनिया भूखों मरे ! जब तक हम हाथी पर बैठ कर नहीं निकलते, और दूसरों को पैदल घिसटते नहीं देखते तब तक हमें बड़प्पन का मज़ा ही नहीं आता !

विक्रम मनुष्यता का कैसा अधःपतन है ! आप के भाई साहब को गुजरात की बादशाहत से भी संतोष नहीं, उन्हें आपके खून की प्यास है ! भाई को भाई के खून का प्यासा देखकर जी चाहता है कि यह सृष्टि एकदम नष्ट-भ्रष्ट हो जाय।

(एक सामन्त आता है, और महाराणा को अभिवादन करता है)

विक्रम क्या है ?

सामन्त गुजरात के बादशाह का दूत आया है।

विक्रम गुजरात के बादशाह का दूत ! अच्छा, भेज दो यहीं !

(सामन्त का प्रस्थान)

चाँदखाँ लीजिए, आ गया मेरे लिए पैग़ाम !

विक्रम कैसा पैग़ाम ?

चाँदखाँ मौत का पैग़ाम।

(दूत का प्रवेश)

विक्रम कहो, क्या है ?

दूत (पत्र देकर) बादशाह सलामत ने यह फ़र्मान भेजा है।

विक्रम देखें, क्या लिखा है ? पढ़िए, चाँदखाँ जी, आप ही पढ़िए।

(पत्र चाँदखाँ को देते हैं)

चाँदखाँ—(पत्र पढ़ता है)

"महाराणा साहब !

आदाब ! आपने गुजरात के एक बागी को पनाह दी है, यह बाहमी दोस्ताना ताल्लुकात के लिए मुज़िर है। आप उसे मेरे सुपुर्द कर दें, वरना मुझे मजबूरन मेवाड़ पर चढ़ाई करनी पड़ेगी।

आपका

बहादुरशाह"

(महाराणा की त्यौरियाँ चढ़ जाती हैं, वे विचार में पड़ जाते हैं)

चाँदखाँ (क्रोध पीकर) हूँ··, मैं बागी हूँ ! महाराणा ! आप क्यों फ़िक्र करते हैं ! मेरे सबब से कोई आफ़त मोल न लीजिए। मुझे जाने दीजिए।

विक्रम कहाँ ? मरने के लिए। ऐसा नहीं हो सकता। मेवाड़ में आज तक ऐसा नहीं हुआ। सूर्य पश्चिम से भले ही निकले, पर मेवाड़ अपनी आन नहीं छोड़ सकता।

चाँदखाँ यह मैं जानता हूँ, महाराणा ! पर एक जान के लिए मुल्क-का-मुल्क बरबाद नहीं करना चाहता। मुझे इजाज़त दीजिए, मैं लौट जाऊँ।

विक्रम हरगिज नहीं। अपने हाथों आपको मौत के मुँह में नहीं डाल सकता।

चाँदखाँ क्या मौत हमेशा ही मेरा रास्ता भूली रहेगी ? जो एक दिन होना ही है, वह आज ही हो ले। और फिर भाई के हाथ की तलवार खाकर मरने में एक ख़ास मज़ा भी तो है।

विक्रम मैं आपको यह मज़ा न लूटने दूँगा। जो मेवाड़ में आ गया, वह मेवाड़ का हो गया। आज से आपकी इज्ज़त सारे मेवाड़ की इज्ज़त है। आपकी ज़िंदगी सारे मेवाड़ की ज़िंदगी

है। मेरे दोस्त ! दोस्ती सुख के दिनों में गले में हाथ डाल कर हँसने के लिए ही नहीं है, विपत्ति के समय एक-दूसरे के दुःख को अपना समझने के लिए भी है। दूत, तुम जाओ ! बादशाह से कह देना, मुझे खेद है कि मैं उनका हुक्म नहीं मान सकता।

(दूत का प्रस्थान)

चाँदखाँ एक मुसलमान के लिए इतना बखेड़ा !

विक्रम क्या कहा ? मुसलमान के लिए ? क्या मुसलमान इनसान नहीं हैं ? जाति और धर्म के नाम पर मनुष्यता के टुकड़े न कीजिए।

चाँदखाँ महाराणा ! आपके खयालात बड़े पाक और ऊँचे हैं ! पर क्या सब राजपूत इसे पसंद करेंगे ! एक मुसलमान के पीछे हजारों हिंदुओं का खून !

विक्रम आप भी मुसलमान हैं और बादशाह भी, फिर एक मुसलमान दूसरे मुसलमान का गला क्यों काटना चाहता है ? वास्तविक अर्थों में धर्म की लड़ाई किसी भी युग मे नहीं हुई। हमेशा एक स्वार्थ से दूसरा स्वार्थ लड़ा है। मै और आप जब दोस्त बन कर रह सकते हैं, तो क्या सबब है, कि मेरे और आप के धर्म यहाँ भाई भाई की तरह गले में हाथ डालकर न रह सके।

चाँदखाँ लेकिन, अपना मजहब फैलाने की ख्वाहिश... ।

विक्रम सफेद झूठ ! मजहब मनुष्य के हृदय के प्रकाश का नाम है। जो मजहब का नाम लेकर तलवार चलाते है, वे दुनियाँ को धोखा देते हैं, धर्म का अपमान करते हैं। सच्चा वीर वही है, खरा राजपूत वही है, जो न हिन्दुओं के अन्याय का हिमा-

यती है और न मुसलमानों के। वह न्याय का साथी है और आज़ादी का दीवाना है। उसे अत्याचारी हिंदू से ईमानदार मुसलमान ज़्यादा प्यारा है। वह अत्याचारी मुसलमान का जितना दुश्मन है, बेईमान और विश्वासघाती हिंदू का उससे कहीं अधिक शत्रु।

चाँदखाँ आप कुछ नई बात कर रहे हैं।

विक्रम नई बात! बिलकुल नहीं। इतिहास के कुछ ही वर्ष पहले के पृष्ठ पलट देखिए। महाराणा संग्रामसिंह जी ने दिल्ली के बादशाह इब्राहीम लोधी को कितनी बार युद्ध में पराजित किया था। पर जब लोधी-वंश पर संकट आया तो उन्हीं राणा साँगा ने उसी इब्राहीम लोधी के पुत्र महमूद लोधी का साथ दिया, उसकी तरफ से बाबर से लड़ाई ली। मेवात के बादशाह हसनखाँ भी बयाना और सीकरी की लड़ाई में उनके सहायक थे। क्या कोई कह सकता है कि मुहम्मद खाँ और हसनखाँ मुसलमान न थे! क्या बाबर मुसलमान न था? फिर ये आपस में क्यों लड़े? तोमर राजा शिलादित्य भी तो हिंदू था, जिसने साँगा जी को धोखा देकर बाबर का साथ दिया और राजपूतों के खिलाफ़ तलवार उठाई! मेरे भाई! मैं फिर कहता हूँ, और सच बात भी यही है, कि मज़हब आपस में नहीं लड़ते, कुछ व्यक्तियों के स्वार्थ लड़ा करते हैं। गरीब और ईमानदार आदमी हिंदू हो या मुसलमान हमेशा अपने पड़ोसियों से मिल कर रहे हैं और रहेंगे।

चाँदखाँ आप सच कहते हैं, राणा जी! हिन्दू और मुसलमान दोनों ही हिन्दुस्तानी हैं और रहेंगे। दोनों को एक होकर

रहना पड़ेगा। पर मुसलमान ज्यादा कट्टर हैं, ज्यादा तंग दिल हैं।

विक्रम नहीं, यह बात भी नहीं है। मालवा के बादशाह महमूदशाह को महाराणा कुंभा ने छः मास तक गिरफ्तार करके रखा था। पर उन्ही महमूदशाह ने दिल्ली के बादशाह के विरुद्ध कुंभाजी की सहायता की, उनके लिए अपनी जान पर खेल कर लड़े। उस समय अगर वे धोखा देते तो क्या अपना बदला नहीं चुका सकते थे? इतिहास कह रहा है, उस लड़ाई को जीतने का श्रेय कुंभा जी की अपेक्षा महमूदशाह को ही अधिक था। कैसी उदारता थी उस मुसलमान में! वास्तव में मनुष्यता या पशुता पर किसी धर्म या जाति का एकाधिकार नही है। कुछ आदमियों के गुण-दोषों को पूरी कौम के मत्थे मढ़ना एक ऐसी गलती है, जिसे लोग गलती ही नही समझते और इसीलिए उसे सुधार नही सकते। अच्छा खैर अब चलिए। आगे की लड़ाई के लिए बैठ कर सलाह करनी है। अत्याचारियों को चुनौती का जवाब देने में मेवाड़ कभी पीछे नही रहा। आज भी वह अतिथि-रक्षा के महान् कर्तव्य के साथ-साथ रक्षा-धर्म का पालन करेगा।

(दोनों का प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

चौथा दृश्य

स्थान गाँडू का राज-महल।

[बहादुरशाह और मुल्लूखाँ बातचीत कर रहे हैं]

मुल्लूखाँ बादशाह सलामत! मेरा तो यही खयाल है कि राणा विक्रमादित्य, चाँदखाँजी को आप के सुपुर्द न करेंगे।

बहादुरशाह न करे, यही तो मैं भी चाहता हूँ। इस वक्त मेवाड़ में आपस की फूट है। मेवाड़ियों की फौजी तैयारी न के बराबर है। मै तो इसी वक्त लड़ाई छेड़ देना चाहता हूँ!

मुल्लूखाँ पर जहाँपनाह, मेवाड़ पर आफत आते ही आपस में बिखरे हुए मेवाड़ी एक हो जाएँगे। मुल्क पर मुसीबत आते ही झगड़े भूल कर जंग के मैदान में कूद पड़ना ही तो उनकी खूबी है।

बहादुरशाह बेशक, राजपूत बड़े बहादुर है। रायसीन का किला फतह करते वक्त मुझे कितनी मुसीबत उठानी पड़ी थी। सिलहदीराय, लक्ष्मणसिंह और भोपट की बहादुरी देख कर मैं दंग रह गया था। पर सब से हैरतअंगेज नजारा था रानी दुर्गावती का सात सौ राजपूतनियों के साथ अपने हाथ से चिता में आग लगा कर जल जाना। किस कौम की औरतें मौत को इस तरह हँसते-हँसते गले लगा सकती है!

मुल्लूखाँ दुर्गावती राणा साँगा जैसे दिलेर बाप की दिलेर लड़की थी। जिस क़ौम की औरतें ऐसी है, उनके मर्दों मे क्यों न बिजली की चमक और तूफान की ताकत हो।

बहादुर मेरे दिल मे महज खूंरेजी की ख्वाहिश नही है। मैं सर काटना नही चाहता, सर झुकाना चाहता हूँ।

मुल्लूखाँ यही तो नामुमकिन है, मेवाड़ का सर उस धात से बना है, जो टूट जाती है, पर झुकती नहीं।

बहादुर इसीलिए तो उसे झुकाने की और भी ख्वाहिश होती है। मेवाड़ से गुजरात के बादशाहों की पुश्तैनी दुश्मनी है। राणा कुंभा ने गुजरात पर जो फतह हासिल की थी, उस की यादगार नागौर का फाटक आज तक चित्तौड़ मे मौजूद है और अब्बाजान की राणा साँगा के हाथों गिरफ्तारी बेइज्जती का वह दाग है, जो हमारे खानदान के दिल पर कयामत तक रहेगा। मेरे कलेजे मे बदला लेने की आग हर साँस के साथ धधक उठती है। मुझे आगा-पीछा कुछ नहीं सूझता। बदला ! सिर्फ बदला! अब्बाजान की बेइज्जती का मेवाड़ियों की बेइज्जती से बदला! (कुछ रुककर) मुल्लूखाँ?

मुल्लूखा जी जनाब।

बहादुर पुर्त्तगीज गवर्नर 'नुनो दे कुन्हा' अभी आये नहीं?

मुल्लूखाँ आते ही होंगे! (कुछ ठहर कर) गुस्ताखी माफ हो एक बात कहूँ?

बहादुर कहो।

मुल्लूखाँ मै इस फिरंगी को नही चाहता।

बहादुर क्यों सूबेदार?

मुल्लूखाँ जिस शख्स के हाथ में तलवार हो, उससे दोस्ती करने में खतरा नही, लेकिन जिसके हाथ में तराजू भी हो और तलवार भी, उससे दोस्ती करना अपने गले मे फाँसी लगाना है।

बहादुर क्यों?

मुल्लूखाँ क्योंकि तलवार जब हमारे सर पर तनती है तो साफ दिखाई देती है, लेकिन तराजू कब हमारा सब कुछ डंडी

के पासँग में मार ले जाती है, कुछ पता नहीं चलता।

बहादुर है तो ठीक। जिन पुर्त्तगीजों ने गुजरात के पुत्तन पैंट, मंगलोर, थाना, तोलाजा और मुजफ्फराबाद को जलाकर खाक किया और चार हजार आदमियों को गुलाम बना कर विलायत भेजा, वे आज मेरी मदद को क्यों आए हैं? इसमे जरूर कुछ राज है।

मुल्लूखाँ राज़ यही है कि वे हिन्दुस्तान की बादशाहत चाहते है। इधर आपको राजपूतों से लड़ाकर कमजोर कर देंगे, उधर दिल्ली का तख्त डॉवाडोल है ही, फिर उन्हें अपना उल्लू सीधा करने में देर न लगेगी।

बहादुर हूँ ... । लेकिन नहीं, मेवाड़ से बदला तो लिया ही जायगा। जानते हो सूबेदार, मैं भी दिल्ली का बादशाह बन सकता हूँ। मगर जब तक मेवाड़ की शान चट्टान की तरह सर उठाए खड़ी है, तब तक मुझे चैन नही मिल सकती। इसे धूल मे मिलाना ही होगा। यूरोपियन तोपखाने की मदद से चित्तौड़ का किला फतह किया जा सकता है, इसीलिए इस पुर्त्त-गीज़ को साथ लेना पड़ा है। यह लो वह आ ही गया।

(नुनो दे कुन्हा का प्रवेश)

बहादुर आइए गवर्नर साहब, बैठिए। आपका तोपखाना तैयार है?

नुनो जी हाँ, इस बार पुर्त्तगीज के लड़ने का तरीका भी आप देखे। राजपूतों को कबाब की तरह भून कर न रख दिया, तो कोई बात नही। लेकिन, बादशाह साहब, इस फतह के इनाम के तौर पर हमें ड्यू पर किला बनाने की इजाजत मिलनी चाहिए।

बहादुर क्या मुजायका है। आप अभी शुरू करा सकते हैं।

नुनो यह आपकी मेहरबानी है !

मुल्लूखाँ सौदागरों को किला बना कर क्या करना है ?

(दूत का प्रवेश, सबकी उत्सुकता उसकी ओर मुड़ जाती है)

बहादुर लौट आए, क्या जवाब दिया राणा ने ?

दूत राणा ने कहलाया है कि बादशाह के भाई मेवाड़ के महाराणा के भी भाई हैं। एक भाई उन्हें मारने को आमादा है, तो दूसरा बचाने को मजबूर है।

बहादुर हूँ !......अच्छा तो महाराणा भी मरने को तैयार हो जायँ। मुल्लूखाँ, फौज तैयार करो। गवर्नर साहब, आप भी अपना तोपखाना सूबेदार साहब के मातहत कर दें। आज ही कूच करना है।

मुल्लूखाँ जो हुक्म।

(मुल्लूखाँ और नुनो दे कुन्हा का प्रस्थान)

बहादुर बस, इस बार सब बेबाक हो जायगा। पुश्तैनी दुश्मनी का हिसाब पाई-पाई बेबाक हो जायगा। (आसमान की ओर ताक कर) अब्बाजान ! आप बहिश्त में बैठे सब देख रहे हैं। आपका एक लड़का आपकी तौहीन करने वाले दुश्मन से जा मिला है, और एक उससे बदला लेने जा रहा है। कहिए अब्बाजान ! आपका क्या हुक्म है ? (घुटने टेक कर हाथ जोड़ कर बैठ जाता है) सुना ! समझा ! हाँ, तो आपको तभी राहत होगी, जब मेवाड़ को धूल में मिलाया जायगा। यही होगा, अब्बाजान ! यही होगा।

(शाहशेख औलिया का प्रवेश)

बहादुर कौन ? उस्ताद !

शाह बेटा, यह सब क्या हो रहा है ?

बहादुर बदला, शाह साहब !

शाह भूलता है बहादुर । हिंदुस्तान में रहने वाले मुसलमान भी हिंदू हैं । क्यों अपने भाइयों का खून बहाता है ? जिस शाख पर बैठा है, उसी को काटने पर क्यों आमादा है ?

बहादुर लेकिन......अब्बाजान की तौहीन का बदला...

शाह किससे ? राणा सांगा तो गए । मेवाड़ की गरीब रियाया का क्या कसूर है ? खुदा की इस बेगुनाह खलकत ने क्या बिगाड़ा है ? यह भी परवर-दिगार अल्लाताला की लाड़ली औलाद है । तू इसे तंग करेगा तो खुदा तुझ पर कहर की बिजली गिराएगा । और फिर महज़ बदले की गरज़ से तो तू यह तूफान नहीं उठा रहा है । अपने दिल से पूछ । क्या उसमें सल्तनत बढ़ाने का लालच नहीं है । भाई के खून से बुझने वाली शाही प्यास नहीं है ?

बहादुर किबला ! चाँदखाँ बागी है और बागी को कुचलना अमन और इन्साफ की पहली सीढ़ी है, इससे आप भी इन्कार न करेंगे । और ये राजपूत ! ये इस ज़माने में हमारे रास्ते के सब से बड़े रोड़े हैं । क्या हर एक भलेमानस को अपना रास्ता साफ नहीं करना चाहिए ?

शाह अहसानफरामोश बहादुर ! भूल गया कि तूने दक्षिण की फतह ग्वालियर के राजपूत राजा और राणा सांगा के भतीजे श्रीपतराय की ही मदद से हासिल की थी । अपने मेहरबानों और मददगारों की कौम से लड़ाई मोल लेना ज़िंदगी के हरे-भरे और सीधे-सादे रास्ते में खाइयाँ खोदना है । राजपूत दरया-दिल होते हैं, उनकी दुश्मनी लड़ाई के मैदान तक ही रहती है, फिर

वे बाप का बदला बेटे से नहीं लेते । राजपूत किसी कौम के दुश्मन नहीं, वे तो बेइन्साफी के दुश्मन और इन्साफ के साथी हैं। अगर तू आदमी होगा तो उनसे दोस्ती करेगा। इस बहादुर कौम को अगर तू दुश्मन बनाएगा तो तेरी सल्तनत भी धूल में मिल जायगी। बहादुर! अब भी होश में आ! सोच समझ कर कदम उठा। (प्रस्थान)

बहादुर सच कहते हो, शेख साहब ! राजपूत किसी के दुश्मन नहीं । 'इस बहादुर कौम को दुश्मन न बना।' अब्बाजान ! क्या आप की भी यही राय है? (रुक कर आकाश की ओर देखकर उत्तेजित होता है) नहीं ? तो कोई चारा नहीं। अच्छा, तो बदला लिया ही जायगा, चाहे सल्तनत चली जाय! खानदान की इज्जत सल्तनत से भी बड़ी है। (गरदन झुका कर चौंकता है) ऐं कोई दिल में कहता है इंसानियत खानदान की इज्जत से बड़ी चीज है। नहीं, मैं इस आवाज का गला घोंट दूँगा। (प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

पाँचवाँ दृश्य

स्थान महाराणा विक्रमादित्य का राज-भवन

[दरबार भरा हुआ है। बीच में सिंहासन पर महाराणा विक्रमादित्य बैठे हुए हैं। उनके दोनों ओर झालर के सोनिगराराव, आबू के देवड़ाराव, प्रतापगढ़ के बाघसिंह, बूँदी के राजकुमार अर्जुन-सिंह, मेवाड़ के सेनापति, भीलराज तथा अन्य सामंत बैठे हुए हैं।]

विक्रम　मेवाड़ के वीरो ! आज आप को किस लिए कष्ट दिया गया है, यह तो आप जानते ही हैं। जन्मभूमि पर संकट की घटाएँ छा रही है, गुजरात की सेना मेवाड़ पर आक्रमण करने चल पड़ी है।

एक सामंत　सब जानते है, महाराणा ! पर वर्तमान परिस्थितियों में किया ही क्या जा सकता है ?

दूसरा सामंत　मेवाड़ियों को निरन्तर लड़ते-लड़ते छः शताब्दियाँ हो गईं। सुख और विश्राम तो किसी ने जाना ही नहीं। आखिर, यह अप्राकृतिक स्थिति कब तक टिक सकती है ?

सेनापति　हमारी सेना भी बहुत थोड़ी है।

पहला सामंत　बहादुरशाह के साथ गुजरात और मालवा की सपूर्ण सेना तो है ही, पुर्त्तगीजों का यूरोपियन तोपखाना भी है। तोपों से लड़ने की ताब तलवारो मे हो ही कैसे सकती है ? धर्मयुद्ध तो अब दुनियाँ मे रहा ही नही।

विक्रम　आपकी क्या राय है, सोनिगराराव जी !

सोनिगराराव　हमारी राय की भी आपको जरूरत हुई, भला ऐसा दिन तो आया !

विक्रम　भीलराज ! आप क्या कहते है ?

भीलराज　मैं ठहरा नीच भील, मैं राज-काज के मामलों मे क्या राय दे सकता हूँ ?

(कर्मवती और चारणी का प्रवेश, सब खड़े हो जाते हैं)

कर्मवती　भीलराज !

भीलराज　माँ !

कर्मवती　पुरानी बातें अभी तक नही भूले ? जब सारे देश

पर संकट पड़ा हो, तब अपने व्यक्तिगत अपमानों की ओर ध्यान देना भीलराज ने कब से सीखा ?

भीलराज अपमान का बाण तो प्राणों के साथ . .

कर्मवती किंतु, देश का अपमान क्या तुम्हारा अपमान नहीं है ? जब देश पराधीन होगा, तब तुम और तुम्हारा कुटुम्ब गुलामी की जंजीरों से मुक्त रह सकेगा ? जिस मेवाड़ की चप्पा-चप्पा भूमि तुम्हारे पुरखाओं के खून से सिंची हुई है, उसे बिना विरोध शत्रु को सौंप दोगे ? बोलो !

भीलराज यह कैसे हो सकता है, देवि !

पहला सामंत किंतु हम में इतनी शक्ति कहाँ है ।

सेनापति हमारे पास उतनी सेना ही कहाँ है ?

कर्मवती पाताल फोड़ कर निकलेगी सेना ! आसमान से टपकेगी सेना ! मेवाड़ के वीरों को प्राणों का मोह ! आज मैं यह क्या देख रही हूँ ! स्वामी ! आज तुम क्या सोचते होगे ? जिस मेवाड़ का मस्तक तुमने अपने प्राणों की बलि देकर ऊँचा किया था, वह आज अपनी मर्ज़ी से शत्रु के चरणों में झुक रहा है ! और यह सब हो रहा है तुम्हारी पत्नी के जीते जी !

सोनिगराराव नीति कहती है कि इस समय सन्धि कर लेने में समझदारी है ।

कर्मवती छिः ! ऐसा कहना मेवाड़ के दिवंगत बलि-पंथियों की अन्तिम रक्त-बूँदों का अपमान करना है । कभी किसी ने सुना कि मेवाड़ ने किसी के आगे झुक कर संधि की प्रार्थना की थी ? तुम्हीं ने क्यों आज मेवाड़ का गौरव मिट्टी में मिलाने का निश्चय कर लिया है ? संधि ! यह शब्द मुँह से निकालते हुए तुम्हें लज्जा न आई, सोनिगराराव जी ! क्या इसीलिए इतना लंबी

तलवार बाँधी है तुमने ! लड़ते-लड़ते मर जाना, या विजय प्राप्त करना राजपूत तो यही दो बातें जानते हैं। यह 'संधि' शब्द आपने किससे सीख लिया ? यदि प्राणों का इतना मोह है तो चूड़ियाँ पहन कर घर बैठो, लाओ यह तलवार मुझे दो।

सोनिगरारावमेरा आशय यह नहीं.........हमें आप इतना हतवीर्य न समझिए।

बाघसिंह हम राजपूत आन पर मर मिटना अभी भूले नहीं हैं।

कर्मवती मैं यह जानती हूँ, वीरो, तभी तो कहती हूँ। महाराणा विक्रमादित्य के पिछले व्यवहारों से आप लोग असन्तुष्ट हैं, यह अनुचित नहीं है; पर, यह तो सोचिए कि एक व्यक्ति के अपराध पर सारे मेवाड़ को दंड देना कहाँ का न्याय है ? देश का मानापमान हम सब के मानापमान के ऊपर है। राणा का महत्व देश के महत्त्व के आगे गौण है।

एकसामंत तो हम क्या करें ?

कर्मवती यह भी कोई पूछने की बात है ? वही करो जो तुम्हारे पूर्वज ऐसे अवसरों पर करते आए हैं। जो गोरा और बादल ने किया था, जो लखन जी और उनके ११ पुत्रों ने किया था, उठो भूखे सिंह की तरह शत्रु-सेना पर टूट पड़ो। लड़ो और लड़ते लड़ते मेवाड़ की मान-रक्षा करो। विजय और वीरगति दोनों श्रेयस्कर हैं। जो हाथ आ जाय उसी को गले लगाने के सिवा तुम्हें क्या करना है ? तुम राजपूत हो, क्षत्रिय हो, अग्निपुत्र हो, प्रलय और भूकम्प की भाँति अजेय हो, अनिवार्य हो। तुम्हारी हुंकार से शत्रु की छाती, टूक-टूक हो जायगी। उठो, अब देर किस लिए ?

सब (उत्तेजित होकर) यही होगा, माँ यही होगा।

चारणी जय! मेवाड़ भूमि की जय! महारानी कर्मवती की जय!

कर्मवती तो इसी समय युद्ध के लिए प्रस्थान करो।

सब जो आज्ञा।

कर्मवती आओ चारणी, एक उपयुक्त गौरव-गान।

(चारणी गाती है)

जय-जय-जय मेवाड़ महान!
तेरे कण-कण में जीवन है,
मूर्तिमान तू नवयौवन है,
प्रलयभरी तेरी चितवन है,
तू आँधी है, तू तूफ़ान!
जय-जय-जय मेवाड़ महान!
तेरी उन्नत रक्त-निशानी,
वज्रघोष है तेरी वाणी,
तेरी तलवारों का पानी,
तृप्त कर रहा रण के प्राण!
जय-जय-जय मेवाड़ महान!
तेरी गौरवमयी कहानी,
प्राणों में भर रही जवानी,
बलि-पथ पर बनकर दीवानी,
जाती है तेरी संतान।
जय-जय-जय मेवाड़ महान!

(चारणी का गाते हुए और उनके पीछे-पीछे सब का दोहराते हुए प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

छठा दृश्य

[चित्तौड़-गढ़ के भीतरी भाग में कर्मवती, जवाहरबाई तथा अन्य क्षत्राणियाँ थालियों में राखी सजाए खड़ी हैं। वीर क्षत्रिय राखी बँधवाने को प्रस्तुत हैं, बहनें गाती हैं]

(गान)

प्रेम-पर्व आ पहुँचा आज,
रखो, बंधु बहनों की लाज,
वह बलि-वेदी रही पुकार,
मर मिटने को हो तैयार,
भाई लो, पकड़ो तलवार।
रण के आज सजा लो साज।
रखो, बंधु जननी की लाज।
नभ में गरज रहे घन-घोर,
उधर शत्रु-दल करता शोर,
चढ़ी काल की भृकुटि कठोर,
पहनो बंधु मरण का ताज।
जन्मभूमि की रख लो लाज।

तार-तार में भर कर प्यार,
लाईं हम राखी अविकार,
इनको करो, वीर, स्वीकार,
फिर रिपु पर टूटो बन गाज।
वीर, मरण के सज लो साज।

जन्मभूमि हो रही अनाथ,
वे ही आज बढ़ावें हाथ,
जिन्हें न प्यारा हो निज माथ,
माँ का ऋण चुक जाय सब्याज।
प्रेम-पर्व आ पहुँचा आज।

(बहनें टीका करके भाइयों को राखी पहनाती, और तलवारें देती हैं)

कर्मवती मेवाड़ में ऐसी रंगीन श्रावणी कभी न आई होगी। भाइयो, क्षत्राणियों की राखियाँ सस्ती नहीं होतीं। ब्राह्मणों की तरह हम पैसे लेकर राखी नहीं बाँधतीं। हमारे तारों का प्रतिदान सर्वस्व-बलिदान है। जिन्हें प्राण चढ़ाने का शौक हो, वे ही ये राखियाँ स्वीकार करें।

एक क्षत्रिय मेवाड़ के क्षत्रियों को यह बात नए सिरे से न समझानी होगी। माँ, हम लोग सदियों से हँसते-हँसते प्राण देते आए हैं। हमारी इस अजस्र-शक्ति का स्रोत और कहाँ है? बहनों की राखियों के ये धागे ही तो हमें बल देते आए हैं।

अर्जुन बहन, तुम्हारे भाई के लिए यह राखी ही जीवन की ध्रुवतारा है। आज यह मरण की ओर इशारा कर रही है, तो क्या हम इसका आदेश अमान्य कर सकते हैं? केवल नक्शे की लकीरें देख कर ही तो देश पर प्राण नहीं दिए जा सकते, तुम्हीं ने तो राखी के धागों द्वारा इन लकीरों का

महत्व समझाया है। जिस प्रकार इन धागों में असीम स्नेह, ममत्व, वेदना और आशीर्वाद भरा है, उसी प्रकार उन लकीरों में भी है। ये धागे उन लकीरों के प्रत्यक्ष प्रतीक हैं।

कर्मवती- धन्य हो, वीरो! तुम से यही आशा थी। अच्छा आओ, राखी की इस मर्यादा में बँध कर प्रतिज्ञा करो कि प्राण रहते मेवाड़ की पताका को झुकने न देंगे।

सब यही होगा माँ, यही होगा।

कर्मवती मेवाड़ के सपूतो, मेवाड़ के अभिमान तुम्हीं हो। तुम्हारी कीर्ति अमर हो। जाओ, रण-भूमि तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है।

(क्षत्रियों का अभिवादन करके प्रस्थान)

कर्मवती बहनो! तुम शीघ्र जाकर घर-घर में वीर-व्रत की तैयारी करो।

(बहनों का प्रस्थान)

कर्मवती बाघसिंह जी! तुम ठहरो। जवाहरबाई! तुम भी ठहरो।

(बाघसिंह जी और जवाहरबाई रुक जाती हैं)

कर्मवती हाँ, बाघसिंहजी! युद्ध का क्या हाल है?

बाघसिंह राजपूत वीरता से लड़ रहे हैं, किंतु, एक तो हमारी संख्या बहुत कम है, दूसरे शत्रुओं का यूरोपियन तोपखाना आग उगल रहा है। उसका मुक़ाबला तलवारों से तो हो नहीं सकता। हमें मरना है, हम हँसते हँसते मरेंगे और बहुतों को मार कर मरेंगे, पर दुःख है तो यही, कि मर कर भी मेवाड़ के मान की रक्षा न कर पाएँगे।

कर्मवती बड़ा कठिन प्रसंग है। इस समय मेरे स्वामी नहीं हैं। उनके रहते मेवाड़ की ओर आँख उठाने का किस में साहस था ? उनके आतंक से मेवाड़ के बाहर भी दूर-दूर तक अत्याचारियों के प्राण काँपा करते थे। मेवाड़ की सीमा में पैर रखने का तो साहस ही किसे हो सकता था ? बाघसिंह जी, हमने आपस के वैमनस्य की आग में अपने ही हाथों अपना सर्वस्व स्वाहा कर दिया।

बाघसिंह अब पश्चात्ताप करने से क्या होता है, देवि ! अब तो हमें मार्ग बताइए। ऐसे प्रसंगों पर विवेक अनुशासन के चरणों पर झुक जाना चाहता है।

कर्मवती मुझे एक उपाय सूझा है।

बाघसिंह क्या ?

कर्मवती मैं हुमायूँ को राखी भेजूँगी।

जवाहरबाई हुमायूँ को ? एक मुसलमान को भाई बनाओगी ?

कर्मवती चौंकती क्यों हो, जवाहरबाई ! मुसलमान भी इनसान है। उनके भी बहनें होती हैं। सोचो तो बहन, क्या वे मनुष्य नहीं हैं ? क्या उनके हृदय नहीं है ? वे ईश्वर को खुदा कहते हैं, मन्दिर में न जाकर मस्जिद में जाते हैं, क्या इसीलिए हमें उनसे घृणा करनी चाहिए ?

बाघसिंह किंतु, और भी तो बाधाएँ हैं। क्या हुमायूँ पुराना वैर भुला सकेगा ? सीकरी के युद्ध के जख्मों के निशान क्या आसानी से मिट सकेंगे।

कर्मवती हमारी राखी वह शीतल प्रलेप है जो सारे घाव भर देता है, वह वरदान है जो सारे वैर-भावों को जलाकर

भस्म कर देता है। राखी पाने के बाद भी क्या कोई वैर-विरोध याद रख सकता है।

जवाहर किंतु क्या शत्रु से सहायता की याचना करना मेवाड़ की मर्यादा के अनुकूल है ?

कर्मवती हमारा शत्रु स्वयं हमारा अभिमान है। समझदार शत्रु को सदा शत्रु बनाए रखना ही तो मनुष्यता नहीं है। हुमायूँ वीर है, वीर-पुत्र है। विग्रह और सन्धि दोनों में वह मेवाड़ियों के लिए योग्य प्रतिपक्षी है। उसे भाई बनना आता है। ऐसे वीर की बहन बनने में किसी भी क्षत्राणी को गर्व होना चाहिए।

जवाहिर मुसलमान भारत के शत्रु हैं।

कर्मवती ऐसा न कहो। उन्हें भी तो भारत में जीना-मरना है। हमारी तरह भारत उनकी भी जन्मभूमि हो चुकी है। अब उन्हें काफिले में लाद कर अरब नहीं भेजा जा सकता। उन्हें रखना पड़ेगा और हमें उन्हे रखना पड़ेगा। वे हमें भाई समझें और हम उन्हें। यही स्वाभाविक है, यही उचित है। इस विकट अवसर पर मेवाड़ की रक्षा का और उपाय ही क्या है ? बाघसिंह जी आप ही कुछ बताइये। आपकी क्या सम्मति है ?

बाघसिंह हम तो आज्ञा-पालन करना जानते हैं, सम्मति देना नहीं।

कर्मवती अच्छा तो फिर वही हो। भ्रातृत्व और मनुष्यत्व पर विश्वास करके हुमायूँ की परीक्षा की जाय। लो यह राखी और यह पत्र आज ही दूत के हाथ बादशाह हुमायूँ के पास भेजिए।

(राखी और पत्र देती है)

जवाहर अच्छी बात है। हम भी देखेंगी कि कौन कितने पानी में है। इस बहाने एक मुसलमान की मनुष्यता की परीक्षा हो जायगी और यह भी प्रगट हो जायगा कि एक राजपूतनी की राखी में कितनी ताक़त है ?

[पटाक्षेप]

दूसरा अंक

पहला दृश्य

स्थान- धनदास का भवन

[धनदास बाहर से हाथ में मोहरों से भरी हुई थैली लिए आता है]

धनदास (थैली की ओर सतृष्ण दृष्टि से देखते हुए)

"पितु-मातु, सहायक, स्वामि, सखा,
तुम ही, धनदेव हमारे हो।"

(दूसरी ओर से धनदास के पुत्र मौजीराम का श्लोक पढ़ते हुए प्रवेश)

मौजीराम "पिबन्ति नद्यः स्वयमेव नोदकं
स्वयं न खादन्ति फलानि वृक्षाः।
धाराधरो वर्षति नात्महेतवे,
परोपकाराय सतां विभूतयः।"

धनदास अरे-अरे! इष्टदेव की स्तुति में विघ्न डाल दिया। यह क्या अगड़म-बगड़म बक रहा है ?

मौजीराम मैं कह रहा था, "पिबन्ति नद्यः स्वयमेव नोदकम् ..."

धनदास　अरे स्वर्गलोक की भाषा न बोल। इसका अर्थ बता, अर्थ?

मौजी　बस अर्थ! केवल अर्थ! आप तो सब जगह अर्थ-लाभ चाहते हैं! सुनिए, पिताजी, मैं कह रहा था, नदियाँ अपना जल स्वयं नहीं पिया करतीं, वृक्ष अपने फल स्वयं नहीं खाते, बादल अपने लिए वर्षा नहीं करते, इसी प्रकार सत्पुरुषों की सम्पत्ति-ऐश्वर्य्य भी सर्वदा दूसरों के उपकार के लिए ही हुआ करती है।

धनदास　हाय! हाय! 'बूड़ा वंश कबीर का उपजा पूत कमाल!' तू मेरी और वंश की लुटिया जरूर डुबाएगा!

मौजी　वाह, पिताजी! मैं तो आपकी स्तुति कर रहा था। आप के समान सज्जन.........

धन०　मैं और सज्जन! हा! हा! हा! अरे मौजी, इस सज्जनता की हवा लगते ही, तिजोरियों का सारा धन हवा हो जाता है। सज्जनता तो मुझसे ऐसी दूर रहती है जैसे...जैसे... बस यहीं तो मेरा दिमाग़ काम नहीं देता। उपमा देना तो मुझे आता ही नहीं!

मौजी　जैसे गधे के सर से सींग.........

धन०　क्यों रे, मेरा अपमान करता है!

मौजी　हः-हाः-हाः! आपका अपमान! उस रोज़ जब आप राज-भवन से पाद-प्रहार का आनंद लूट कर आए थे, तब आप ही ने तो हँस कर कहा था 'व्यापारी का अपमान होता ही नहीं!'

धन०　मेरी शिक्षा मुझी पर लागू करेगा?

मौजी　अच्छा पिताजी, आप सज्जन नहीं हैं ऐसा क्यों कहते

हैं ? इस श्लोक की तो सारी बातें आप पर घटती हैं। आपने जो धन का ढेर इकट्ठा किया है, वह किस लिए ? खुद फटी अँगरखी, थेगली-लगी धोती, और डेढ़ हाथ की पगड़ी पहनते हैं। यह सारा धन तो परोपकार के लिए जमा किया है न ? जब आप स्वर्ग के स्वर्ण-भवन में पधारेंगे, तब इस सब का उपयोग तो मैं ही करूँगा न। "परोपकाराय सतां विभूतयः।"

(माया का प्रवेश).

माया क्यों रे कुलच्छन ! कैसी बोली बोलता है ?

(मौजीराम हँस कर भाग जाता है)

धन० (थैली की ओर देखता हुआ)

"पितु, मातु, सहायक, स्वामि सखा………"

माया यह क्या हो रहा है ?

धन० अरे ! तुमने फिर भंग कर दिया।

माया कहीं भंग तो नहीं खा गए।

धन० अरी, मेरा भजन भंग कर दिया।

माया किस का भजन ?

धन० धन देवता का। "पितु, मातु, सहायक स्वामि सखा…"

माया रहने भी दो……

धन० आज बड़े आनन्द का दिन है।…अहः-हः। आज बड़े आनंद का दिन है। सचमुच बड़े आनन्द……

माया कैसा आनन्द ?

धनदास अरी, कुछ मत पूछ ! बस मेरे पौ बारह है।

माया क्यों, फिर कोई प्रपंच रचा है क्या ?

धन० मैंने नहीं, विधाता ने। भाग्यवश बहादुरशाह ने मेवाड़ पर चढ़ाई कर दी है। बड़े आनंद का दिन है।

माया डूब मरो चुल्लू भर पानी में। मेवाड़ पर संकट आया है और तुम मौज मना रहे हो, तुम्हें आनन्द आ रहा है।

धन० तुम क्या जानो; जिस दिन लड़ाई छिड़ती है, व्यापारियों के घर में घी के चिराग़ जलते हैं घी के। अहा-हा! कैसी बड़ी बड़ी ऑखों से घूरने लगीं जैसे दो हीरे चमक रहे हों!

माया शर्म की बात है! लड़ाई छिड़ने में तुम्हें लाभ नज़र आता है? आखिर तुम्हें नर-रक्त की उस भयंकर बाढ़ से क्या हाथ आएगा?

धन० तुम नहीं जानतीं; मैंने बहादुरशाह को रसद पहुँचाने का ठेका ले लिया है। एक-एक के दस-दस होंगे, देवी!

माया धिक्कार है तुम्हें। देश के साथ विश्वासघात। तुम ऐसा पाप

धन० मैं ऐसा पाप न करता तो यह चटक-मटक!...

माया भाड़ में जाय यह चटक-मटक! (ज़ेवर उतार-उतार कर फेंकती है)

धन० ठहरो भवानी, मेरी दुर्गा, मेरी काली!

माया जाओ, मैं भी तुम से नहीं बोलूँगी! यदि मुझ से बोलना चाहो तो मेरा कहना मानो।

धन० औरतों की अकल से तो मेवाड़ के महाराणा चलते है। तभी तो मौत उनके लिए मुँह बाये खड़ी रहती है।

माया और तुम संजीवनी खा कर आए हो? अमृत पी कर पैदा हुए हो?

धन० मैं क्या बेवकूफों की तरह मरूँगा ! महीने-दो महीने तुम्हारे इन कोमल हाथों से सेवा न कराई, हरिणियों को शर्माने वाली इन बड़ी-बड़ी आँखों में आँसू न देखे, तो मरने का मज़ा ही क्या आया ? यह भी कोई मरना है, कि तलवार लगी और सर धड़ से अलग !

माया बेशर्मी की भी कोई हद है ! मैं तुम से कहती हूँ, यह ठेका न लो ! यह सरासर पाप...

धन० व्यापार में पाप कैसा ? जो पैसे देता है, उसे हम माल देते हैं । जो ज़्यादा कीमत देगा, उसी के हाथ हम माल बेचेंगे । हम तो अपना लाभ देखेंगे, देश अपनी भुगते !

माया आग लगे तुम्हारे व्यापार में ! मेरे स्वामी ! लाखों मेवाड़ियों का अभिशाप न लो ! यह धन मरते वक्त सर पर लाद कर न ले जाओगे । मेरे देवता ! तिजोरियों के ताले खोल दो, देश के काम के लिए, उसी देश के लिए जिस की मान-रक्षा के लिए सदियों से मेवाड़ियों ने अपने प्राणों की आहुतियाँ दी हैं, जिनका अन्न-जल हमारे वंश की नस-नस में भिदा हुआ है । मेरे सर्वस्व ! तुम राक्षस नहीं, देवता बनो, ताकि मैं अपनी श्रद्धा के फूल तुम पर चढ़ा सकूँ । बोलो, प्राणेश्वर ! बोलो, तुम्हारे कुकृत्य पर दशों दिशाएँ हँस रही हैं । इस हँसी का तुम्हारे पास क्या उत्तर है ? जन्मभूमि, इस धातु के थोड़े से टुकड़ों से तुच्छ नहीं है ? तुम्हारे हृदय में क्या इतना भी मनुष्यत्व नहीं है आज मुझे अपने जीवन-मरण की समस्या सुलझानी है । कहो नाथ, मुझे अपने पतीत्व पर गर्व करने दोगे या नहीं ? जन्म-भूमि के कण-कण को गंभीर घृणा से अपने वंश की रक्षा करोगे,

या नहीं ? सोचो तो देव, क्या मैं तुम से यह अनुरोध कर के अन्याय कर रही हूँ।

धन० नहीं, माया ! तुम सच कहती हो । तुम वास्तव में देवी हो । तुमने आज मेरी आँखें खोल दीं। उफ मैं कितनी ग़लती पर था, कैसा जघन्य पाप करने चला था ! तुमने मुझे बचा लिया। ले जाओ, माया, मेरा संपूर्ण धन ! जो वीर रण में वीरगति पावें उनके बाल बच्चों की सेवा में मेरा सर्वस्व समर्पित कर दो ।

माया धन्य हो, स्वामी ! यही मेरे देवता के अनुकूल है। तुमने संसार को बता दिया है कि लोभ नहीं, उदारता ही वैश्यों का स्वाभाविक धर्म है । आओ, स्वामी, आज बड़े आनंद का दिन है। सचमुच बड़े आनन्द का दिन है।

(दोनों का प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

दूसरा दृश्य

[विहार में गंगा के तट पर हुमायूँ का फौजी डेरा।
अपने खास तंबू में हुमायूँ और उसके सेनापति
हिंदूबेग और तातारखाँ बैठे हैं।]

हिंदूबेग जहाँपनाह, शेरखाँ हार कर बंगाल की तरफ भाग तो गया; पर, वह चोट खाया हुआ काला नाग चुप न बैठ सकेगा ।

हुमायूँ एक बात ज़रूर है। शेरखाँ बड़ा दिलेर और बड़ा बहादुर है; ठीक अब्बजान की तरह ।

तातारखाँ कहाँ आसमान का चाँद और कहाँ झोपड़ी का चिराग़ ! कहाँ बादशाह बाबरशाह, और कहाँ लुटेरा, शेरखाँ !

हुमायूँ नाकामयाब सिपाही लुटेरा और बाग़ी ही कहलाता है, मगर ज्यों ही कामयाबी उसके सर पर ताज पहनाती है, त्यों ही वह लुटेरा वह बाग़ी बादशाह हो जाता है।

तातारखाँ शेरखाँ तो आपका दुश्मन है, आप उसकी तारीफ.........

हुमायूँ दुश्मनी आँखों की रोशनी नहीं छीन लेती ! शेरखाँ की बहादुरी, इन लड़ाइयों में साफ रोशन हो चुकी है। बेशक उसकी आँखों में बिजली की चमक, भौहों में कमान का सा खिंचाव और चेहरे पर बहादुरी का नूर नज़र आता है। उसकी मज़बूती से बंद मुट्ठियों से मालूम होता है, गोया वह ज़िंदगी और मौत दोनों को मुट्ठी में लिए घूमता है, ऐसे दिलेर दुश्मन से लोहा लेना भी फ़ख्र की बात है।

हिंदूबेग यह ज़हरीला साँप इस वक्त घेरे में आ गया है, इस मौके पर अगर इसकी थूथरी न कुचल दी गई तो यह फिर काबू में न आवेगा।

हुमायूँ मैं भी यही सोचता हूँ। पर, अभी तक भाइयों ने कुमक नहीं भेजी। मैं उसी के इंतज़ार में हूँ।

तातारखाँ मुझे तो उनके रंग-ढंग देख कर अंदेशा होता है कि जरूर कुछ दाल में काला है।

हिंदूबेग गुस्ताखी माफ हो, जहाँपनाह ! रहमदिली और सल्तनत का इंतज़ाम, दोनों की निभ ही नहीं सकती। इनका आपस में छत्तीस का रिश्ता है। बादशाहों के दिल की जगह

तो लोहे का टुकड़ा होना चाहिए। आपने अपने भाइयों को उन्हीं सूबों का सूबेदार बना दिया, जिनके बाशिंदे बहादुर और मजबूत हैं और जिनकी आपकी फौज में सख्त जरूरत पड़ती रहती है। काबुल और पंजाब, जो आपकी सल्तनत के मजबूत बाजू हैं, वही आज आपके हाथ मे नहीं ?

हुमायूँ मेरे भाई और मै क्या दो शख्स हैं ?

तातारखाँ बेशक ! भाई भी धोखा......

हुमायूँ ऐसा न कहो तातारखाँ ! मुहब्बत और यक़ीन पर ही तो आसमान के तारे टिके हुए हैं। इनसानियत के भरोसे पर ही वे अपनी ज़िंदगी पर मुसकरा रहे हैं। मुहब्बत और यकीन से ही दुनियाँ चल रही है। मुहब्बत के जोश मे ही चाँद मुसकराता आता है। मुहब्बत के जोश में ही समंदर में तूफान उठता है ! भाई भाई से दगा करेगा तो यह जमीन टूट कर करोड़ों टुकड़ों में बँट जायगी, सूरज बुझ जायगा, खुदा की कुदरत अँधेरे के काले दरया में डूब कर नेस्तनाबूद हो जायगी।

तातारखाँ जो न होना चाहिए, दुनियाँ में वही ज्यादा हो रहा है। भाई की गरदन पर भाई छुरी चला रहा है, फिर भी जमीन और आसमान अपनी जगह पर क़ायम है। सूरज उसी तरह निकलता है और चला जाता है। उसी तरह शाम होती है, चाँद चमकता है, हँसता है, मुसकराता है और चला जाता है। खुदा, गोया सब को ग़ोरखधंधे में बाँध कर सो गया है। दुनियाँ अपने आप, जैसे जी चाहे चलती रहे। दुनियाँ की रफ्तार किस जगह ठोकर खाती है, उसके पहियों के कील-पुर्जे कहाँ-कहाँ से खराब हो गए हैं उनसे कहाँ-कहाँ से बेसुरी आवाज आती है, यह

गोया वह देखता ही नहीं, उसे गोया इससे कोई सरोकार ही नहीं।

हिंदूबेग बहादुरशाह को ही देखिए। एक भाई को कब्र में पहुँचा कर, दूसरे पर तलवार ताने खड़ा है।

तातारखाँ सल्तनत की लालच है ही ऐसी चीज़। यह लालच का साँप किसके दिल के बग़ीचे में कहाँ छिपा बैठा है यह तब तक जानना मुश्किल है, जब तक वह काट ही नहीं खाता। जो छिपा बैठा होता है, वही एक दिन बेपर्दा होकर फन ऊँचा करके झपट पड़ता है। इस पर हमें ताज्जुब न करना चाहिए, मगर हम करते हैं।

हिंदूबेग सल्तनत की हिफाजत और मजबूती के लिए यह जरूरी है कि आप अपने भाइयों के हाथ से ताक़त छीन लें।

हुमायूँ यह न कहो, तातारखाँ! वे मेरे भाई हैं। भाई लफ्ज़ में कितनी मिठास, कितना अपनापा भरा है। उसमें कितनी मुहब्बत है, कितना सुख है, कितना आराम है!

हिंदूबेग जिस फूल को हम कलेजे से लगा कर रखना चाहते हैं, वही किसी दिन काँटे चुभा देता है, जहाँपनाह! आप धोखे में हैं।

हुमायूँ यह धोखा बहुत प्यारा है। मुझे इस धोखे की फूलों की सेज पर सोने दो। उस पर शक के काँटे न बिछाओ। ठगना अज़ाब है, ठगा जाना नहीं।

तातारखाँ बादशाह की आँखों में मुहब्बत के आँसू नहीं इंसाफ की सुर्खी चाहिए। बादशाह सलामत, भाइयों पर रियायत......

हुमायूँ यह दुनियाँ की सल्तनत तो एक न एक दिन छोड़नी ही होगी, तातारखाँ! बहिश्त की सल्तनत के रास्ते में

इसे रोड़ा न अटकाने दो। जिसे हमने अपना समझा है, वह अपना नहीं है आखिर, मेरे भाई भी तो बादशाह बाबर के बेटे हैं। अगर वे तख्त चाहते हैं तो मुझे इनकार न करना चाहिए। तुम्हे याद है, तातारखाँ, तुमने भी देखा था, हिंदूबेग, आखिरी वक्त अब्बाजान ने कहा था "बेटा हुमायूँ, अपने भाइयों पर रहम करना। अब तू ही इनका बाप है।" मेरे अब्बाजान अब्बाजान जिन्होंने मेरी मौत खुदा से अपने लिए माँग ली, उनका हुक्म मेरे लिए बहिश्त की सल्तनत से बढ़ कर है।

(एक पहरेदार का प्रवेश)

पहरेदार (अभिवादन करके) जहाँपनाह!

हुमायूँ क्या है?

पहरेदार खिदमत में मेवाड़ से एक दूत आया है।

हुमायूँ मेवाड़ से? अच्छा यहीं भेज दो।

(पहरेदार का प्रस्थान)

हुमायूँ मेवाड़ से दूत! मेवाड़ लफ्ज में ही कुछ जादू है। बयाना और सीकरी की लड़ाई में मैं भी अब्बाजान के साथ था। राजपूतों से हमारी फौज कैसा खौफ खाती थी। राणा साँगा! उन्हे तो खुदा ने फौलाद से बनाया था। उनकी तिरछी नजर कयामत का पैगाम थी। मेवाड़ पर आजकल बहादुरशाह ने चढ़ाई कर रक्खी है न?

(दूत का प्रवेश)

हुमायूँ आओ मेवाड़ के बहादुर!

दूत (अभिवादन करके) स्वर्गीय महाराणा संग्रामसिंह जी की महारानी कर्मवती जी ने आपको यह सौगात भेजी है।

हुमायूँ (हाथ बढ़ा कर) मेरी किस्मत! हिंदूबेग! तुम

जानते हो मैं मेवाड़ की बहुत इज्ज़त करता हूँ, और हर एक बहादुर आदमी को करनी चाहिए। वहाँ की खाक भी सर पर लगाने की चीज़ है, वहाँ के ज़र्रे-ज़र्रे में बहिश्त है।

तातारखाँ दुश्मन की तारीफ़ करने में, जहाँपनाह से बढ़कर......

हुमायूँ दुश्मन ! हः हः हः ! दुश्मन ! आँखों पर से तअस्सुब का चश्मा हटा कर देखो। जिन्हें हम दुश्मन समझते हैं, वे सब हमारे भाई हैं, हम एक ही खुदा के बेटे हैं, तातार ! हाँ, देखूँ तो इसमें क्या लिखा है ?

(हुमायूँ पत्र पढ़ते-पढ़ते विचार-मग्न हो जाता है।)

हिंदूबेग क्या सपना देखने लगे, जहाँपनाह ! महारानी कर्मवती ने क्या जादू का पिटारा भेजा है। ?

हुमायूँ सचमुच हिंदूबेग, उन्हों ने जादू का पिटारा भेजा है। मेरे सूने आसमान में उन्हों ने मुहब्बत का चाँद चमकाया है। उन्हों ने मुझे राखी भेजी है, मुझे अपना भाई बनाया है। (दूत से) बहन कर्मवती से कहना, हुमायूँ तुम्हारी माँ के पेट से पैदा न हुआ तो क्या, वह तुम्हारे सगे भाई से बढ़कर है। कह देना मेवाड़ की इज्ज़त, मेरी इज्ज़त है। जाओ।

(दूत का प्रस्थान)

तातारखाँ आपके अब्बाजान के जानी दुश्मन की औरत ने......

हिन्दूबेग उसी औरत ने जिसके खाविंद ने कसम खाई थी कि मुग़लों को हिंदुस्तान के बाहर खदेड़े बग़ैर चित्तौड़ में क़दम न रखूँगा।

हुमायूँ अफ़सोस, कि तुम इस राखी की कीमत नहीं

जानते ! छोटे-छोटे दो धागे जानी दुश्मन को भी मुहब्बत की जंजीरों में जकड़ देते हैं। यह मेरी खुशक़िस्मती है कि मेवाड़ की बहादुर महारानी ने मुझे भाई बनाया है, और बहादुरशाह से मेवाड़ की हिफ़ाज़त करने के लिए मेरी मदद चाही है।

तातारखाँ तो क्या जहाँपनाह ने उनकी इल्तजा मंजूर कर ली है।

हुमायूँ यह इल्तजा नहीं, हुक्म है ? राखी आ जाने के बाद भी क्या सोच-विचार किया जा सकता है। यह तो आग में कूद पड़ने का न्योता है। हिंदुस्तान की तवारीख कह रही है, कि राखी के धागों ने हज़ारों कुर्बानियाँ कराई हैं। मैं दुनियाँ को बता देना चाहता हूँ कि हिन्दुओं के रस्मोरिवाज मुसलमानों के लिए भी उतने ही प्यारे हैं, उतने ही पाक है।

तातारखाँ एक मुसलमान के ऊपर एक हिंदू को तरजीह…

हुमायूँ कौन हिन्दू है और कौन मुसलमान, यह मैं खूब समझता हूँ। तातारखाँ, मैं जो कुछ कह रहा हूँ, खुदा की हिदायत के मुताबिक कह रहा हूँ।

तातारखाँ एक काफ़िर कौम को मुसलमानों के खिलाफ़ मदद दे रहे हैं, क्या यही खुदा की हिदायत है ?

हुमायूँ तुम भूलते हो। तुम सब एक ही परवरदिगार की औलाद हो। हिन्दुओं के अवतारों ने और तुम्हारे पैग़ंबर ने एक ही रास्ता दिखाया है। क़ुरान शरीफ में साफ लिखा है कि, "हमने हर गिरोह के लिए इबादत का एक ख़ास रास्ता मुकर्रिर कर दिया है, जिस पर वह अमल करता है, इसलिए उस पर

झगड़ा न करो[1] ।" तुम्हे साफ बताया गया है कि "नेकी यह नहीं है कि तुमने इबादत के वक्त मुँह मशरिक की तरफ किया या मगरिब की तरफ, या इसी तरह की कोई जाहिरा रस्म-रिवाज कर ली, नेकी की राह तो उसकी राह है, जो खुदा पर, आखरत के दिन पर, सारी खुदादाद किताबों पर और सारे पैगंबरों पर ईमान लाता है, अपना प्यारा धन रिश्तेदारों, अपाहिजों, गरीबों, जारत करने वालों, माँगनेवालों की राह में और गुलामों को आजाद कराने में खर्च करता है, जो बात का पक्का है, जो डर और घबराहट, तंगी और मुसीबत के वक्त धीरज रखता है। ऐसे ही लोग हैं जो बुराइयों से बचने वाले इनसान है।"[2] यही बात हिन्दुओं की मजहबी किताबें कहती हैं। फिर मजहब दोनों की दोस्ती के बीच में दीवार कैसे बन सकता है ?

तातारखाँ वे हमारे पैगंबर को नही मानते ।

हुमायूँ और तुम उनके पैगंबर को मानते हो ? तुम्हारे कुरान शरीफ में तो तुम्हें हुक्म दिया गया है, कि तुम दूसरों के पैगंबरों पर भी ईमान लाओ, उनका यकीन करो। सचाई जहाँ भी रोशन हुई है, जिस किसी के भी मुँह से रोशन हुई है, सचाई है।[3] खुदा की साफ हिदायत होते हुए भी तुम हिन्दुओं के धर्म और अवतारों की इज्जत न करते हुए उनसे लड़ते हो। राजपूत इस वक्त सचाई पर है, और बहादुरशाह गुमराह है।

१ मौलाना अबुलकलाम आज़ाद द्वारा अनूदित कुरान-शरीफ, सूरा २२, आयत ६६। २ सूरा २, आयत २८५। ३ सूरा ३, आयत ७८।

सच्चे मुसलमान का काम सचाई का साथ देना है, फिर चाहे उसे मुसलमान के ही ख़िलाफ़ क्यों न लड़ना पड़े। बस आज ही मेवाड़ की तरफ कूच करना होगा।

हिंदूबेग मुझे हिन्दू-मुसलमान का ख़याल नही। पर मैं समझता हूँ कि शेरखॉ को खुला छोड़ कर मेवाड़ की तरफ लौट जाना ख़तरे से खाली नही।

हुमायूँ अब सोचने का वक्त नहीं है। बहन का रिश्ता दुनियाॅ के सारे सुखों, दौलतों, ताकतो और सल्तनतों से बढ़ कर है। मैं इस रिश्ते की इज्जत रखूँगा। सल्तनत जाय, पर मैं दुनियाॅ को यह कहते नही सुनना चाहता कि मुसलमान बहन की इज्जत करना नही जानते। तख्त से उतर कर अगर किसी सच्ची बहन के दिल में जगह पा सकूॅ, तो अपने आप को दुनियाॅ का सब से बड़ा खुश-किस्मत इनसान समझूॅगा। बहन कर्मवती! तुम्हारी राखी मुझे वही ताक़त दे, जो वह राजपूतों को देती आई है। तातारखॉ, हिन्दूबेग! जल्द फौज तैयार करो।

(राखी हाथ में बाँधते-बाँधते जाता है। सब का प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

तीसरा दृश्य

[मेवाड़ के एक वन-प्रदेश में एक कुटी के बाहर श्यामा और विजयसिंह]

विजय माॅ, आकाश लाल हो गया है।

श्यामा तो क्या हुआ, विजय! तू इतना व्यग्र क्यों है? तेरी ऑखें क्यो लाल हो उठी हैं?

विजय देखती नहीं हो, माँ! वीर-प्रसू मेवाड़ की भूमि चारों ओर से लाल हो उठी है!

श्यामा सब देखती हूँ, बेटा!

विजय माँ!

श्यामा क्या बेटा!

विजय मैं होली खेलूँगा!

श्यामा होली! आज कल! आज कल कैसी होली? सावन में होली!

विजय मैं रक्त की होली खेलूँगा, माँ! मैं युद्ध में जाऊँगा! (आकाश की ओर हाथ उठा कर) देख, माँ, देख!

श्यामा क्या बेटा?

विजय क्या तुझे कुछ दिखाई नहीं देता?

श्यामा कहाँ?

विजय वहाँ, आसमान में! वह कोई हाथ बढ़ा कर इशारा कर रहा है।

श्यामा इशारा! किसकी ओर इशारा!

(भीलराज का प्रवेश)

विजय बलि-पथ की ओर! (भीलराज से) बाबा, मैं भी लड़ाई में जाऊँगा!

भीलराज तुम! मेरे लाल तुम! तुम राजकुमार होकर भी राजकुमार नहीं हो। मेवाड़ की सेना में तुम्हें उपयुक्त गौरवमय पद नहीं मिल सकता।

श्यामा तुम्हारी माँ भीलनी है इस लिए!

विजय—बाबा, मैं साधारण सिपाही की भाँति, अपनी

जन्मभूमि के लिए लड़ कर प्राण दूँगा। आप भी तो ऐसा करते हैं।

भील हम हैं ही साधारण सिपाही साधारण मेवाड़-निवासी।

विजय मैं भी तो वही हूँ।

भील नहीं भैया। यह कैसे भूल जाऊँ कि तुम स्वर्गीय महाराणा रत्नसिंह जी के पोते हो! मेवाड़ के राजसिंहासन पर तुम्हारा भी अधिकार है। तुम्हारी माँ क्षत्राणी न हो कर, भील-कन्या है, केवल इसी कारण उस मेवाड़ के रनवास में तुम्हारे लिए स्थान नहीं है और तुम्हे उस कुटुम्ब में आदर नहीं मिल सकता। यह सरासर अन्याय है, बेटा! भीलनियों की आत्मा क्या क्षत्राणियों की आत्मा से काली होती है, क्या उनके हृदय में स्नेह नहीं होता, क्या उनकी आँखों में तेज नहीं होता? यदि वे नीच हैं, तो कोई उनके दरवाजे पर प्रणय की भीख माँगने क्यों आता है? फूल क्या तोड़ कर, सड़क पर फैंक देने के लिए हैं? ना बेटा, मैं इस सामाजिक विषमता को, उच्च जातियों के दंभ के अत्याचार को, सहन नही कर सकता। मैं तुम्हें मामूली सिपाही की तरह सेना में भेज कर तुम्हारा अपमान न कराऊँगा।

विजय किसी का अपराध, और किसी को दंड! बाबा, न मैं भील कुमार हूँ और न राजकुमार, मैं हूँ केवल एक मेवाड़-निवासी। बाबा! मेरे शरीर का सीसौदिया-वंश से संबंध है, यह बिलकुल भूल जाओ। मेवाड़ क्या केवल महाराणाओं का है; क्या केवल क्षत्रियों का है? नहीं, वह हम सब का है, हममें से

प्रत्येक का है। वह अपना हृदय चीर कर सब को समान रूप से जीवन देता है। राजा-महाराजाओं को भी और हम को भी। जब उस पर संकट आया है, तो उसकी आग मे सब को जलना पड़ेगा। उस पर प्राण न्योछावर करने का सब को अधिकार है। बाबा! मेवाड़ के भील जो इस देश पर सैकड़ों वर्षों से अपने शीश चढ़ा रहे हैं, वह क्या मेवाड़ के राज-सिंहासन के लोभ से, या सेनापति बनने के लिए? वे केवल कर्तव्य की आवाज़ पर कुर्बान हो रहे हैं। मैं, कुछ नहीं, केवल मेवाड़ का एक सैनिक बनना चाहता हूँ। मेवाड़ को इस समय सेनापतियों की नहीं, सैनिकों की; मन्त्र-दाताओं की नहीं, मन्त्र पर अमल करने वालों की आवश्यकता है। माँ, मुझे पद-रज दो! बाबा, मुझे आशीर्वाद दो। भगवान, मुझे शक्ति दो कि मैं माँ के ऋण से उऋण हो सकूँ!

श्यामा जाओ, बेटा, तुम्हारी कीर्ति अमर हो।

भील सुनो कुमार, यह मैं जानता हूँ, कि वीर-हृदय जन्म-भूमि की मान-रक्षा के लिए अपने मानापमान को तुच्छ समझते है, किन्तु मेरे दुलारे, मैंने तुम्हें राज-कुमार समझ कर ही पाला है, मैं तुम्हें युद्ध मे राजकुमार की मर्यादा के अनुकूल ही भाग लेने दूँगा। अपने ५०० चुने हुए भीलों की सेना मैं तुम्हारे साथ करता हूँ। तुम किसी के अधीन न हो कर सकट के समय मेवाड़ी सेना की सहायता करना। चलो, बेटा!

(भीलराज और विजयसिंह का प्रस्थान)

श्यामा जाओ मेरी आँखों के तारे! मेरे हृदय के प्रकाश! मैंने पाप किया था, मेवाड़ के राजकुमार को क्षण भर के लिए

रण में जाने से रोका था, उसका प्रायश्चित्त आज संपन्न हो।
माँ के हृदय! तू क्यों टुकड़े-टुकड़े होता है? तू रोता भी है,
हँसता भी है! तुझ में आज प्रलय और सृष्टि दोनों मुसकरा
रही हैं। मेरे सूने आकाश के एकमात्र नक्षत्र, तुम भी......
नहीं नहीं। मैं दुखी नहीं हूँगी। हाँ, उस दिन चारणी ने क्या
कहा था, "देश सर्वोपरि है, देश सर्वश्रेष्ठ है" जो सर्वश्रेष्ठ है,
उसके चरणों पर शेष सर्वस्व का उत्सर्ग करना ही होगा।

जय-जय-जय मेवाड़ महान।
लोहू की लहरों पर चलता तेरे गौरव का जलयान!

(गुनगुनाते हुए प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

चौथा दृश्य

स्थान—चित्तौड़गढ के बाहर बहादुरशाह का फौजी डेरा

[बहादुरशाह और मुल्लूखाँ बातें कर रहे हैं]

बहादुर जानते हो, मुल्लूखाँ, मर्दों के बाजुओं को इतनी ताक़त क्यों दी गई है? उनकी मुट्ठी इतनी कड़ी क्यों बनाई गई है?

मुल्लूखाँ इसीलिए कि वे मर्द हैं।

बहादुर नहीं, इसलिए कि वे दुनियाँ भर में तहलका मचाते फिरें। चट्टानों को काटें और नदियों को बाँधें। जिस तरह शराबी शराब पिये बिना नहीं रह सकता, उसी तरह बहादुर बिना लड़े नहीं रह सकते, फिर मेरा नाम तो बहादुरशाह है!

मेवाड़ के राजपूत बहादुर हैं, इसमें शक नहीं, पर मैं बहादुरशाह हूँ; मेरा लोहा उन्हें मानना ही पड़ेगा।

मुल्लूखाँ चोट खाया हुआ खानदान, चोट खाए हुए साँप की तरह खौफनाक होता है। आप मेवाड़ को सर भले ही कर लें, पर यहाँ अपना राज कायम न कर सकेंगे। आप जीत के नशे में इन खूनी दिनों को भले ही भूल जायँ, पर जिन्होंने चोट खाई है, जिन्होंने अपने रिश्ते-दारों को मेवाड़ पर कुर्बान किया है, वे क्या एक घड़ी के लिए भी ये दिन भुला सकेंगे ?

बहादुर यह सच है। आज चित्तौड़ को मैं धूल में भले ही मिला डालूँ पर मेवाड़ का सर ऊँचा ही रहेगा। लेकिन मैं भी तो चोट खाए हुए खानदान की औलाद हूँ। यही सबब है कि मैं इतना बेदर्द हो रहा हूँ। मेवाड़ के गाँवों में आग लगा कर मैं खुशी से फूल उठता हूँ। राणा साँगा आज होते तो देखते कि मुबारिकशाह का बेटा, अपने बाप का बदला किस तरह चुका रहा है। काश, वे आज मेरे मुकाबिले में मैदान में खड़े होते ?

(शाहशेख औलिया का प्रवेश)

शाह तो तुम घोंसले में घुस गये होते। राणा साँगा ने खुल्लमखुल्ला मैदान में तलवार चला कर मुबारिकशाह को गिरफ्तार किया था, तुम्हारी तरह गुजरात के बेकसूर गाँवों में आग नहीं लगाई थी।

बहादुर तो कैसे लगाते ? गुजरात के गाँवों में भी तो हिंदू ही रहते थे। हिंदुओं के गाँवों को हिंदू ही कैसे जलाता !

शाह फिर वही हिंदू-मुस्लिम सवाल ! हिंदुओं को मुसलमानों से कितनी मुहब्बत है, यह तो इसी से जान सकते हो कि राणा ने एक मुसलमान मेहमान की जान बचाने के लिए सारे मुल्क को तबाह करना मंजूर किया। बहादुर ! तू आज क्या से क्या हो गया है ? मेवाड़ की गरीब रियाया ने तेरा क्या बिगाड़ा है, जो तू उनके घरों में आग लगवा कर शैतान की हँसी हँस रहा है।

बहादुर लोग मुझे बादशाह नहीं मानते, इसी की यह सजा है !

शाह जो रहम से हाथ धो बैठा है, उसे कैसे कोई बादशाह माने ? गाँवों को जलाकर खाक कर देने वाले को उनके बाशिंदे क्या खाक बादशाह मान सकते हैं ? इस खूबसूरत आबादी को बरबाद करके क्या तुम मरघट पर अपना तख्त जमाओगे ?

बहादुर मैं मेवाड़ का कलेजा चीर कर, तलवार से, खूनी अल्फाजों में एक दफा लिख देना चाहता हूँ, "मेवाड़ मेरा है।"

शाह मेवाड़ का कलेजा किस धात से बना है, यह दुनियाँ अच्छी तरह देख चुकी है। खैर, तुझे अपनी बादशाहत ही बढ़ानी है, तो बढ़ा, पर हिन्दुओं के मन्दिरों को, गरीब इनसानों की इबादतगाहों को क्यों तुड़वाता है ?

बहादुर इस लिए कि साथ साथ बुतों को तोड़ कर सवाब भी लूटता चलूँ।

शाह- भोले बहादुर ! गुस्से में अन्धे बहादुर ! तुम्हारे इस काम से सारी मुस्लिम कौम शर्मिंदा है। कुरानशरीफ में लिखा है, कि "उस से बढ़ कर ज़ालिम कौन हो सकता है, जो किसी

को खुदा की इबादतगाहों मन्दिरों में इबादत करने से रोकता है; उनके मन्दिरों को तोड़ने की कोशिश करता है। जो लोग ऐसे जुल्म करते हैं, वे वाकई इस लायक नहीं कि खुदा की इबादतगाहों में पैर रखें। याद रखो, ऐसे आदमियों की दुनिया में बदनामी होती है और उन्हें दूसरी दुनिया में बड़ी तकलीफ सहनी पड़ती है।"[१] बहादुर, तुम दीन की तरक्की नहीं कर रहे बल्कि जिस तरह मक्खियाँ बीमारी फैलाती है, उसी तरह तुम मजहबी तअस्सुब फैला रहे हो। तुमने तअस्सुब की आग को फूँक मार मार कर इतना धधका दिया है, कि आज सारी इनसानियत की दुहाई दे कर भी उसे बुझाया नहीं जा सकता। तुम दीने-इस्लाम की जड़ काट कर, उसकी शाखाओं में पानी दे रहे हो।

बहादुर सच कह रहे हैं, शेख साहब! वाकई मैं भूला हुआ था। मैं कुरान शरीफ की कसम खाकर कहता हूँ, कि अब हिंदू-मन्दिर पर आँच न आने दूँगा।

शाह और चित्तौड़ पर से घेरा हटा लोगे?

बहादुर यह न होगा, शाह साहब। मैं इतना आगे बढ़ आया हूँ कि अब पीछे नहीं लौट सकता। मैं हैरत के साथ देख रहा हूँ कि मेवाड़ की शान की रस्सी जल गई है, पर उसकी एँठन नहीं गई। मेरे दिल में यह अरमान है कि उसे पैरों से कुचल कर धूल कर जाऊँ!

शाह मगर मेरे भोले बहादुर, तू नहीं जानता कि वह धूल इनसानों के लिए अकसीर बन जायगी। उसे लोग सर से

१ कुरानशरीफ, सूरा २, आयत ११४।

लगाएँगे, उसे सिजदा करेंगे। और वे ही तुम्हारे नाम को जमीन पर लिख कर उसे पैरों से कुचलेंगे, उस पर थूकेंगे।

बहादुर मुझे शैतान भी बनना पड़े, तो बनूँगा। पर अपने खानदान के सर का बेइज्जती का काला निशान मेवाड़ के राजवंश के खून से धोए बिना न मानूँगा। शाह साहब, आप बहिश्त की बात करते हैं, जिन्हें न हम समझ सकते हैं और न जिन पर अमल कर सकते हैं। आज अगर आप खुद बादशाह होते और आपके अब्बाजान की किसी ने बेइज्जती की होती, तो आप शायद इस तरह दुश्मनी को भूल जाने की नसीहत न देते? दिल के घाव की टीस कैसी होती है, आप जैसे फकीर क्या जानें?

(मुगल दूत का प्रवेश)

बहादुर क्या है? कहाँ से आए हो?

मुगल-दूत शाहंशाह हुमायूँ ने यह खत भेजा है।

बहादुर हुमायूँ ने? अच्छा लाओ।

(ले कर पढ़ता है, पढ़ते-पढ़ते चेहरे का रंग बदल जाता है)

मुल्लूखाँ कहिए बादशाह साहब, खत में ऐसी कौन-सी बात है, जिसके सबब से इतने पसोपेश में पड़ गए।

बहादुर (दूत से) अच्छा, तुम बाहर ठहरो। मैं सोच कर जवाब दूँगा।

(दूत का प्रस्थान)

बहादुर (कुछ सोच कर) हूँ! हुमायूँ भाई बना है! अपने दुश्मन की औरत का भाई बना है! वाह कर्मवती! तू पूरी जहर की पुड़िया है। सूत के दो धागे भेज कर, मुसलमान से मुसलमान

को लड़ा देना चाहती है। हुमायूँ क्या, फरिश्ते भी आ जायँ तो भी अब मेवाड़ को नहीं बचा सकते। मेवाड़ की हिफाजत के लिए, आस्तीन के साँप की हिफाजत के लिए, अपने मुसलमान भाई से लड़ोगे! हुमायूँ, तुम्हारी यह नादानी रहम के काबिल है।

शाह इसे कहते हैं, इनसानियत! दुश्मनी को कैसे भुलाया जा सकता है, यह कर्मवती और हुमायूँ से सीखो।

बहादुर शाह साहब, आप जिस घड़े में नसीहत भर रहे हैं बदकिस्मती से उसमें छेद हो गया है। जितना भरते हैं, उससे ज्यादा निकल जाता है। मुल्लूखाँ, अभी हुमायूँ के पास खत भेजो, लिख दो कि मेवाड़ आप का भी दुश्मन है और हमारा भी। काफिरों का खातमा करने में आप को हमारी मदद करनी चाहिए। हम आप को शेरखाँ को दबाने में मदद देंगे।

शाह यह कभी न होगा। अगर होगा भी तो मैं न होने दूँगा। हुमायूँ, आज इम्तहान है, तेरा ही नहीं, सारी इनसानियत का इम्तहान है। देखे, तू सच्चा मुसलमान साबित होता है या नहीं!

(प्रस्थान)

बहादुर चलो मुल्लूखाँ, जल्द इस खत का जवाब लिख भेजो।

(दोनों का प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

पाँचवाँ दृश्य

[मेवाड़ की एक देहाती सड़क पर कुछ ग्रामीण बातें कर रहे हैं]

एक ग्रामवासी लड़ना है तो मैदान में आ कर दो-दो हाथ करे। गाँवों में आग लगा देना भी कोई लड़ने का तरीका है ?

दूसरा ग्रामवासी मारने के लिए भी किसी तरीके की जरूरत है ?

तीसरा ग्रामवासी पाड़ों की लड़ाई में बाड़ का चुरकन होता ही है, भैया ! लड़ते हैं बड़े-बड़े राजा-महाराजा, सम्राट्-बादशाह, सेठ-साहूकार, और मारे जाते हैं बेचारे गरीब सिपाही। लड़े सिपाही, नाम सरदार का।

पहला ग्रामवासी सिपाही तो जान देने के लिए ही तनख्वाह पाते हैं, पर गाँव वालों के घर क्यों जलाये जाते हैं ?

दूसरा ग्रामवासी अरे भैया ! 'खिसियानी बिल्ली खंभा नोचे' वाली कहावत नहीं जानते ? महाराणा की सेना पर तो बस चलता नहीं, बहादुरशाह के सिपाही निरीह गाँव वालों पर अपनी बहादुरी बघारते हैं।

तीसरा ग्रामवासी अब की बार तो चित्तौड़ का सूर्य भी अस्ताचल की ओर उतरता दीखता है। मुट्ठी भर राजपूत, चाहे वे यमराज के अवतार ही क्यों न हों, शत्रु के टिड्डी दल को कैसे समाप्त कर सकेंगे ! प्रायः सभी वीर-योद्धा शत्रु सेना के महासमुद्र की लहरों को काटते-काटते, उन्हीं में डूब गए। भला, लहरों को किसने काटा है।

तीसरा ग्रामवासी मेवाड़ का दीपक अंतिम बार बड़े ज़ोर से भभक कर बुझ जाना चाहता है।

पहला ग्रामवासी मैंने तो सोचा है, मेवाड़ को सदा के लिए प्रणाम कर लूँ। घर जल कर ख़ाक हो ही गया। बच्चे और पत्नी भी उसी में स्वाहा हो गए।

दूसरा ग्रामवासी हम सब का भाग्य एक ही स्याही से लिखा गया है। अब मेवाड़ में रह कर ही क्या करेंगे? राजाओं की लड़ाई में गरीब क्यों पिसें? कोई राजा हो हमारी बला से, हम तो सदा गरीब ही रहेंगे।

(चारणी, श्यामा और माया का गाते-गाते प्रवेश)

(गान)

वीरो! समर-भूमि में जाओ,

सोचो तो मेवाड़-निवासी,
माँ को होने दोगे दासी?
ओ बलिदानों के विश्वासी,
आगे कदम बढ़ाओ।
वीरो, समर-भूमि में जाओ।

जब रिपु ने है त्योरी तानी,
घर में रहना है नादानी,
देह एक दिन है मिट जानी,
मरो, अमर-पद पाओ।
वीरो, समर-भूमि में जाओ।

कितने ही सैनिक मस्ताने,
पहुँचे तलवारें चमकाने,
तुम क्यों घर बैठे दीवाने,

चलो शौर्य दिखलाओ ।
वीरो समर-भूमि में जाओ ।

दूसरा ग्रामवासी धन्य हो, देवियो।

श्यामा तुम, यहाँ रास्ते पर खड़े क्या कर रहे हो?

पहला ग्रामवासी जिनके घर जल कर खाक हो गए, वे इस आसमान के नीचे कहीं न कहीं तो खड़े होंगे ही।

तीसरा ग्रामवासी जिनके लिए कहीं आश्रय नहीं रहा, वे सड़क पर खड़े न रहें तो क्या करें?

चारणी क्या करें? अभी तुमने सुना नहीं? वे युद्ध में जाएँ।

पहला ग्रामवासी हम तो मेवाड़ छोड़ कर जा रहे हैं।

माया क्यों? प्राणों के भय से?

श्यामा जहाँ जाओगे, वहाँ कभी मौत न आएगी?

चारणी एक दिन मरना तो सब को पड़ेगा, भैया! फिर अपनी जन्म-भूमि के लिए क्यों नहीं मरते?

माया क्या माँ इसी लिए दूध पिलाती है कि जब तक वह तुम्हारी सेवा करे, तुम उसके पास रहो, पर जब वह माँ बूढ़ी या रोगी हो जाय, तो उसे मौत के मुँह में जाने को छोड़ जाओ?

श्यामा इस पुण्य-भूमि पर छः शताब्दियों से, मेवाड़ के राज-वंश और प्रजा ने समान रूप से जो रक्त चढ़ाया है, वह क्या व्यर्थ जायगा? जो वीर आज चित्तौड़ के दुर्ग की रक्षा करते हुए प्राण दे रहे हैं, वे क्या मूर्ख हैं? महाराणा शत्रु से संधि करके आराम से रह सकते थे, पर वे तुम लोगों की

स्वतंत्रता की रक्षा के लिए प्राणों पर खेल रहे हैं और तुम, जो मेवाड़ की शान के प्रमुख आधार हो, इस प्रकार .....

पहला ग्रामवासी असल में राणा को अपने स्वाभिमान और राज्य की रक्षा करनी है।

चारणी मूर्खो! मेवाड़ के महाराणा, अपने आप को प्रजा के सेवक मानते रहे हैं। बाप्पा रावल के काल से आज तक, प्रत्येक महाराणा ने अपने आप को एकलिंगजी का दीवान ही कहा है। भाइयो, तुम्हारे वास्तविक राजा तो एकलिंगजी हैं, स्वयं परमेश्वर हैं, मेवाड़ के महाराणा नहीं। वे तो इस ईश्वरीय भूमि के पहरेदार-मात्र हैं।

श्यामा परमेश्वर और पंच में कोई अंतर नहीं होता। महाराणा परमेश्वर के दीवान हैं, अर्थात् प्रजा के सेवक हैं।

माया ऐसे उदार राजवंश के साथ तुम विश्वास-घात करोगे?

श्यामा क्या तुम मरने से डरते हो? जो सैनिक तुम्हारे लिए जान देने गए हैं उनके प्रति तुम्हारे हृदय में जरा भी सहानुभूति नहीं? क्या भाड़े के टट्टू सिपाही रण-भूमि में अब तक ठहर सकते थे? वे सामान्य सैनिक नहीं, मेवाड़ की स्वतंत्रता के मत्युंजय पुजारी हैं। उन्हें देख कर भी तुम्हारे हृदय में मर मिटने की इच्छा नहीं जाग उठती? इतने कायर हो गए हो तुम!

दूसरा ग्रामवासी नहीं देवियो, हम मरने से नहीं डरते। किंतु, जो वीर युद्ध-भूमि में सो गए हैं, उनके परिवार को दाने-दाने के लिए तरसते देख कर, हमारे प्राण काँप उठे हैं।

तीसरा ग्रामवासी माँ, हम तो लड़ कर प्राण दे सकते हैं, किंतु उन बच्चों को तो लड़ना नहीं आता । उनका गला घोंट सकते, तो......

माया परमेश्वर को सब की चिन्ता है ! भाइयो आज मेवाड़ पर घोर संकट आया है । ऐसे समय पर घर-बार और बाल-बच्चों का मोह व्यर्थ है ! आज महामारी आ जाय, और तुम लोग कुत्तों की मौत मर जाओ, फिर भी तो कोई तुम्हारे बाल-बच्चों का पालन करेगा !

पहला ग्रामवासी ठीक कहती हो, देवि ! वास्तव में यह मोह ही है। हमें अपने आप को जन्म-भूमि के चरणों पर चढ़ा देना चाहिए। फिर कौन देखने आता है ? बाल-बच्चों को मरना होगा तो मरेंगे।

माया मरेंगे क्यों ? मैं मेवाड़ के धन कुबेर धनदास की पत्नी वचन देती हूँ, कि अपने विपुल धन की अंतिम पाई तक उन पर खर्च करूँगी।

तीसरा ग्रामवासी धन्य हो देवी, धन्य हो ! तुमने सब से बड़ी कठिनाई हल कर दी !

दूसरा ग्रामवासी मेवाड़ की देवियों की उदारता, वीरता और शक्ति से ही तो मेवाड़ की पताका सदियों से गौरव-शिखर पर जड़ी हुई है।

श्यामा अच्छा, तो तुम सब समर-भूमि में जाने को तैयार हो ?

सब अवश्य ! हम सहर्ष प्राण देने को तैयार हैं।

चारणी तो चलो, हमें अभी ग्राम-ग्राम जा कर एक बड़ी सेना एकत्र करनी है।

श्यामा गाओ चारणी, प्राणों में उन्माद जगाने वाला ओजस्वी गीत गाओ।

(चारणी गाती है, सब दोहराते हैं)...

सोचो तो मेवाड़-निवासी,
माँ को होने दोगे दासी ?
ओ बलिदानों के विश्वासी !
आगे कदम बढ़ाओ।
वीरो, समर-भूमि में जाओ।

(गाते गाते सब का प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

छठा दृश्य

स्थान—कर्मवती का भवन

[कर्मवती अकेली विचार-मग्न खड़ी है]

कर्मवती [आकाश की ओर देख कर, हाथ जोड़ कर] प्रियतम ! तुम मेरी प्रतीक्षा कर रहे हो। जिस मेवाड़ के लिए तुमने अपने शरीर पर अस्सी घाव झेले थे, जिसके चरणों पर अपने प्राण निछावर कर दिए थे, उसी के गौरव की रक्षा के लिए मैं इतने दिन जीवित रही हूँ, उसी को गृह-कलह और बाहरी शत्रु, दोनों से बचाने के लिए। किंतु, नियति निष्ठुर हँसी हँस रही है। (सहसा एक धड़ाका होता है, तीव्र प्रकाश और धुआँ दिखाई देता है) हैं, यह क्या ? सारा आकाश धुएँ से काला हो गया ! क्या वास्तव में मेवाड़ का भाग्याकाश सदा के लिए धूमाच्छन्न हो जायगा ? मेवाड़ अब तेरे लिए कौन सा

सहारा शेष रह गया है ? (कुछ सोच कर) उधर ! उधर आकाश का एक कोना अभी उज्ज्वल है, आशा का नक्षत्र, मानो एक ओर मन्द मन्द मुसकरा रहा है । हुमायूँ ! भाई हुमायूँ ! तुमने मेरी राखी स्वीकार की है, मेवाड़ की रक्षा का वचन दिया है, किंतु यह विलंब सर्वनाश का निमंत्रण है । तुम्हारे आते-आते ही कहीं सब समाप्त न हो जाय ! मेरी राखी की लाज रखने का अवसर कहीं हाथ से न निकल जाय !

(सामन्तो सहित बाघसिंह का प्रवेश)

बाघसिंह भाभी ! (कंठावरोध)

कर्मवती क्या हुआ बाघसिंह जी ! ऐसे घबराए हुए क्यों हो ? यह भयंकर धड़ाका कैसे हुआ ? यह प्रकाश और धुआँ क्यों हुआ ?

बाघसिंह विधाता का वज्र टूटा है, भाभी ! क्या कहूँ ? सुरंग खोद कर शत्रुओं ने दुर्ग की एक दीवार बारूद से उड़ा दी है । दीवार का हमें इतना शोक नहीं, किंतु......(रुक जाता है)

कर्मवती रुकते क्यों हो ? छिपाते क्यों हो ? कहो कहो ! भयंकर बात कहते हुए भी क्षत्रियों को कंठावरोध न होना चाहिये । जानते नहीं, क्षत्राणियों का हृदय फूल से कोमल होते हुए भी वज्र से कठोर होता है । वे सब कुछ सुन सकती हैं; सब कुछ सह सकती है । कहो, किस बात से तुम इतने व्यथित हो ? कहो न !

बाघसिंह भाभी, उसी ओर की दीवार उड़ी है, जिस ओर आपके भैया ५०० हाड़ा वीरों के साथ शत्रु सेना का संहार कर रहे थे । उनकी वीरता और उनके साहस ने शत्रुओं के हौसले

पस्त कर दिए थे। वह मेवाड़ी सेना के स्तंभ, हम लोगों के अंधकारपूर्ण, मेघाच्छन्न भाग्याकाश के एकमात्र उज्ज्वल नक्षत्र सहसा.........(पुनः साश्रु कंठावरोध)

कर्मवती धन्य हो अर्जुन ! तुमने मेरी राखी का ऋण चुका दिया। बाघसिंह जी ! छिः ! तुम आँसू गिराते हो। भाई, क्षत्रिय का हृदय जलती हुई मरुभूमि के समान जल-हीन होना चाहिए, धधकता हुआ अंगारा होना चाहिए। उसकी आँखें मरुभूमि के आकाश के समान मेघहीन होनी चाहिए। यह मोह तुम्हें शोभा नहीं देता। अर्जुन, भैया मेरे, तुम भी गए। बहन के हृदय ! तुम्हें अपनी दृढ़ता का अभिमान रहा है। तुम दुखी थोड़े ही हो सकते हो। धन्य हो वीर ! तुमने हाड़ा-वंश को गौरव के उच्च शिखर पर पहुँचा दिया। बाघसिंह जी ...

बाघसिंह भाभी ! तुम्हारी आँखों में आँसू न देख कर मुझे डर लगता है।

कर्मवती रो-रोकर जीवन को आँसुओं में डुबोने से कोई लाभ नहीं, इसलिये सारी विपत्तियों को हँसी में उड़ा देना उचित समझती हूँ। जानते हो बाघसिंह जी, इस हृदय में क्या मचल रहा है।

बाघसिंह तूफान ! आँधी !

कर्मवती हाँ, पर उससे भी अधिक उसे भीतर ही दबा रखने की इच्छा। दिल पर पहाड़ रख कर हँसना हर क्षत्राणी का नित्य-कर्म होता है।

बाघसिंह किंतु इस असह्य दुःख के पहाड़ को.........

कर्मवती हाँ, मैं झेल लूँगी। स्वामी की मृत्यु का समाचार

भी मैंने हँसते-हँसते सुना था। मेवाड़ का ऋण अभी चुका नहीं है, भाई! भगवान ने मेवाड़ जैसी स्वर्ग से सुंदर भूमि हमें सौंप कर अपना कर्त्तव्य पूरा कर दिया। अब उसकी रक्षा करना तो हमारे ही साहस का कार्य है। अभी न जाने कितनी बहनों को अपने भाई, कितनी माताओं को अपने पुत्र, और कितनी पत्नियों को अपने पति इस भूमि को भेंट करने पड़ेंगे! तब हमारा अधिकार इस पर स्थिर हो सकेगा। अर्जुन ने तो केवल मेरी राखी का ऋण चुकाया है, पर आप लोगों को अपने देश का ऋण चुकाना है। आप लोगों से तो इससे भी अधिक की आशा है।

एक सामंत　हाँ, हमें प्राण चढ़ाने में कोई आपत्ति नहीं है, पर अब दुर्ग की रक्षा न हो सकेगी।

दूसरा सामंत　दुर्ग का जो भाग टूट गया है, उस ओर से शत्रु-सेना प्रवेश करेगी। जब वह टिड्डीदल यूरोपियन तोपखाने के साथ आगे बढ़ेगा, तब उसे कौन रोकेगा।

(सैनिक वेश में जवाहरबाई और चारणी का प्रवेश)

जवाहर　दुर्ग की रक्षा स्वयं दुर्गा करेगी।

कर्मवती　हमें तो इस समय तुम्हीं साक्षात् दुर्गा जान पड़ती हो।

बाघसिंह जी　तुम्हारे चरणों की धूल लेने को जी चाहता है।

जवाहर　कौन कहता था, दुर्ग की रक्षा न होगी? दीवार टूट गई है तो टूट जाय। मेवाड़ की एक-एक वीरांगना अभेद्य दीवार है। जब तक हमारे हाथों में तलवार है, देह में प्राण हैं, तब तक शत्रु-दल की एक चिड़िया भी चित्तौड़ में नहीं घुस

सकती ! यूरोपियन तोपख़ाना तो क्या; विधाता का वज्र भी हमें नहीं हटा सकता ।

बाघसिंह नक्शों की निर्जीव लकीरें ही देख कर मेवाड़ के वीर सदियों से प्राण नहीं दे रहे, तुम जैसी वीरांगनाओं की आँखों का इशारा ही उन्हें बलि-पथ की ओर ले जाता रहा है । भाभी, आज तुम्हें भाभी कहने में शर्म आती है । तुम तो साक्षात् कराला काली हो, भैरवी हो । पाषाण का निर्जीव चोला छोड़ कर मन्दिर से निकल पड़ी हो । यह तलवार तो साक्षात् काल-भैरवी की जिह्वा जान पड़ती है ।

जवाहर निश्चय, यह भैरवी जिह्वा है । बरसों की प्यासी है । चलो वीरो ! आज इसकी प्यास बुझानी है । चारणी, गाओ तो एक शक्ति-गान । (चारणी गाती है)

आज शक्ति का तांडव हो ।

युग-युग से है खप्पर खाली,
सोच-विचार न कर अब काली,
भर उस में लोहू की लाली,
यही आज तव आसव हो ।
आज शक्ति का तांडव हो ।

देखें लोचन जब रतनारे,
टूट पड़ें अंबर के तारे,
मूर्च्छित हों निशिचर, हत्यारे,
जब माँ तव रव भैरव हो ।
आज शक्ति का तांडव हो ।

(गाते-गाते सब का प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

सातवाँ दृश्य

स्थान — चित्तौड़-दुर्ग की टूटी हुई दीवार से कुछ दूर
नंगी तलवार लिये घूम रहा है]
[बहादुरशाह सैनिक-वेश में,

बहादुर — बहादुरशाह की बहादुरी का सिक्का, अब दुनियाँ के दिल पर जम कर रहेगा। चित्तौड़, वही चित्तौड़, जो हिन्दुस्तान की बड़ी से बड़ी ताकतों की हँसी उड़ाता था, आज मिट्टी में मिल कर रहेगा। राणा सांगा, आज तुम होते, तो देखते कि गुजरात का बादशाह मिट्टी का बेजान पुतला नहीं है। उसकी टेढ़ी नजर चित्तौड़ जैसे सैकड़ों किलों को धूल में मिला सकती है। चित्तौड़, तू सदियों से सर उठाए खुदा की शान को उसी तरह तरह मुसकरा रहा है, आज खून में नहा कर भी उसी तरह मुसकरा रहा है। तेरी एक दीवार टूट चुकी है, फिर भी तू हँस रहा है। बला की हिम्मत है। तेरी इसी हिम्मत को हमेशा के लिए पस्त करने का बीड़ा इस बहादुर ने उठाया है।

(मुल्लूखाँ और एक पुर्तगीज़ सेनाध्यक्ष का प्रवेश)

बहादुर — क्यों सूबेदार, अभी तक हमारी फौज किले में दाखिल नहीं हुई। क्या टूटी हुई दीवार.......

मुल्लूखाँ — बादशाह सलामत, एक दीवार टूट चुकी है, पर उससे भी मजबूत दूसरी दीवार सामने आ खड़ी हुई है।

बहादुर — क्या दूसरी दीवार बना ली गई? इतनी जल्दी! और तुम क्या बुत बने खड़े रहे?

पुर्त० सेनाध्यक्ष — नहीं, जनाब! वह ईंट-पत्थर की दीवार नहीं, चलती फिरती दीवार है, बिजली की तरह चमकने वाली, आग की तरह जलाने वाली।

मुल्लूखाँ खुद राजमाता जवाहरबाई टूटे हुए हिस्से की हिफाजत कर रही हैं। टूटी हुई दीवार के तंग रास्ते पर वह कयामत की तसवीर की तरह डट कर खड़ी हैं, जो आगे बढ़ता है, उसी को जहन्नुम का रास्ता दिखा देती हैं।

पुर्त० सेनाध्यक्ष कैसा प्यारा था वह नजारा! दोनों हाथों से, वह नेकी की तरह खूबसूरत औरत, तलवार चलाती हुई हमारी फौज पर टूट पड़ी। लड़ना छोड़ कर मैं तो तमाशा देखने लगा। जी चाहा उसके कदमों पर सर रख दूँ।

मुल्लूखाँ उसकी तलवार मौत का पैगाम थी। उसे इस तरह लड़ते देख कर राजपूतों की फौज जोश के नशे में पागल हो गई हम मुसलमान देवी-देवताओं को नहीं मानते, पर वह सचमुच देवी है। आप से क्या कहूँ, उसकी अंगारों-सी आँखें देख कर हमारी तोपें गोले उगलना भूल गईं।

पुर्त० सेनाध्यक्ष जब वह काली घटा की तरह बालों को हवा में उड़ाती, बिजली की तरह तलवार चमकाती झपटी, तब हमारी फौज को गोया नींद आने लगी।

बहादुर लानत है ऐसे सिपहसालारों को! तुम से तो औरत अच्छी! (पुर्तगीज़ सेनाध्यक्ष से) इसी ताकत से दुनियाँ में तहलका मचाने का दम भरते हो? और मुल्लूखाँ, तुम्हें क्या लकवा मार गया है? मैं आज किले पर दखल चाहता हूँ। चाहे फरिश्ते भी सामने आ खड़े हों, चाहे आसमान से बिजली बरसे, चाहे जमीन आग उगले, आज किले में दाखिल होना ही चाहिए। चलो, मैं खुद भी चलता हूँ।

(तीनों का प्रस्थान और भील सैनिकों सहित
विजयसिंह का प्रवेश)

विजय उफ ! कैसा भयंकर युद्ध हो रहा है ? राजमाता जवाहरबाई काल-भैरवी की भाँति दोनों हाथों में तलवार लिये शत्रु सेना को खेत की तरह काट रही है । उनका संपूर्ण शरीर लोहू से लथ-पथ हो गया है । यह दृश्य देख कर मुर्दा मेवाड़ में भी क्यों जान न आ जाय । वह लो, बहादुर शाह, मुल्लूखाँ और पुर्तगीज़ तोपखाना आ पहुँचा । महारानी घिर गई । हाय, क्या अनर्थ हुआ चाहता है ? वह देखो, वे अपनी सेना को छोड़ कर अकेली ही शत्रु सेना में घुस गई हैं । बस, अब देर करना असंभव है । सबल, तुम दूसरी ओर से जाओ । ५०० भीलों को लेकर शत्रु-सेना पर टूट पड़ो । हम इधर से जाते हैं ।

(एक भील एक ओर, शेष दूसरी ओर जाते हैं । थोड़ी देर में मुसलमानों से घिरी हुई, जवाहर बाई तलवार चलाती हुई आती है)

मुल्लूखाँ (अलग खड़ा होकर) बहुत हो चुका महारानी ! आपकी बहादुरी को हम सिजदा करते हैं, पर अब आप यहाँ से निकल कर नहीं जा सकतीं । आपकी फौज काफी दूर रह गई है आप को बचाने अब कोई नहीं आ सकता । यह तलवार हमें दीजिए, यह खूनी ज़ेवर आप को ज़ेबा नहीं देता । आप तो गोया सुनती ही नहीं । न सुनेंगी तो मरना ही पड़ेगा । अच्छा तो मैं मजबूर हूँ......

(आक्रमण में सम्मिलित होता है, इतने में
विजयसिंह भीलों सहित आता है)

विजयसिंह : खबरदार ! अगर जान प्यारी है तो महारानी पर हाथ न उठाना ।

(सहसा हथियार रुकते हैं)

मुल्लूखाँ : तू कौन है रे छोकरे !

विजय : छोकरा ! ह-ह-ह ! नहीं जानते । मैं हूँ तुम्हारी मौत, तुम्हें युद्ध करने का शौक है न, आओ उसे मैं पूरा करूँ । एक स्त्री पर इतने बहादुर एक साथ आक्रमण कर रहे हो । क्यों साहब, आपके यहाँ इसी को बहादुरी कहते हैं ? जाते कहाँ हो ? ठहरो । अभी तुम्हें मेवाड़ी तलवार का तेज दिखाता हूँ ।

(तलवार चलाना शुरु करता है, सब लड़ते हुए चले जाते हैं, केवल जवाहरबाई रह जाती है)

जवाहर : यह बालक कौन है ? देखते ही मेरी आँखों में घटा घिर आई, नस-नस में बिजली दौड़ गई, हृदय उमड़ आया । युद्ध करने में भी कैसा कुशल है ? देवताओं के सेनापति कार्तिकेय ही मानो आ गये है । वैसा ही सुन्दर ! वैसा ही वीर ! विधाता को मेवाड़ की रक्षा अभीष्ट है, तभी तो यह दैवी सहायता आ पहुँची । अरे यह इतनी मेवाड़ी सेना कहाँ से आ पहुँची । वह लो, शत्रु-सेना भाग चली । शाबास बालक !

(विजयसिंह का प्रवेश)

जवाहर : धन्य हो, बेटा । तुमने आज मेरे नहीं संपूर्ण मेवाड़ के प्राण बचाए हैं । तुम्हारा उपकार......।

विजयसिंह : उपकार न कहो, माँ । यह तो कर्त्तव्य-पालन है । अपने चरणों की रज दो । (चरण छूता है) मेरे साथी प्रतीक्षा कर रहे हैं, मैं जाता हूँ ।

जवाहर क्यों, क्या तुम दुर्ग के भीतर न चलोगे ?

विजय न।

जवाहर क्यों ? तुम्हें देख कर, बेटा, न जाने क्यों मुझे रोमांच हो आया है ! जैसे हमारा तुमसे कोई पुराना संबंध हो ! चलो, बच्चे ! दुर्ग में चलो !

विजय न, वहाँ मेरे लिए स्थान नहीं है।

जवाहर ऐसे वीर पुत्र के लिए स्थान नहीं है ! तुम कौन हो सच बताओ।

विजय मैं कौन हूँ ? इतने वर्ष तक मेवाड़ के राजवंश ने यह नहीं जानना चाहा, तो अब जानने की जरूरत ही क्या है ? मुझे भूल के जंगल में छिपा रहने दो। मैं हूँ, मेवाड़ के एक राजकुमार की भूल।

(सहसा श्यामा का प्रवेश)

श्यामा मुझे जानती हो राजमाता ! क्षत्राणी और भीलनी के एक ही प्रकार की आत्मा होती है, उन्हें एक ही से अधिकार होते हैं, समाज यदि इस बात को मानता तो, जिस सिंहासन पर आज विक्रमादित्य बैठे हैं, उस पर मेरा पुत्र विजयसिंह भी बैठ सकता था। किंतु, वह सीसोदिया-वंश में उत्पन्न हो कर भी मेवाड़ के राजमहलों को छोड़ कर जंगलों में रह रहा है ! किस लिए, जानती हो ? आप के थोथे वंशाभिमान और समाज के अन्याय के कारण। चलो बेटा, मेवाड़ के महलों के गद्दों पर नहीं, मेवाड़ की धूल पर ही तुम्हारा वास्तविक आसन है।

जवाहरबाई कौन ? श्यामा।

श्यामा हाँ, श्यामा।

जवाहर मेवाड़ के राज-भवन ने तुम्हें कब स्थान नहीं दिया। तुम्हारा राज्य पर उतना ही अधिकार है जितना मेरा। मैं यहीं विजय के माथे पर टीका करती हूँ, इसे युवराज बनाती हूँ। यह रोली नहीं, मेरी तलवार में लगे हुए रक्त की लाली है।

(विजय को टीका करती है)

विजय किंतु, मुझे पिताजी ऊपर बुला रहे हैं। मुझे तो उनके पास जाना है। मैं युवराज बना हूँ। एकदम युवराज बन गया हूँ। हः हः हः ! कैसी अद्भुत बात है। केवल एक दिन के लिए, बस एक ही दिन के लिए मैं युवराज बना हूँ। जानती हो, माताजी, इस रक्त के टीके का ऋण मुझे कल अपने प्राण देकर चुकाना है। इतने से समय के लिए मैं आपका अनुरोध क्या टालूँ ?

[पटाक्षेप]

तीसरा अंक

पहला दृश्य

[धनदास और मौजीराम अपने मकान के बरामदे में घूम रहे हैं]

धन० हः हः हः।

मौजी० आप भी खूब हैं ! बिना कारण हँसते हैं।

धन० तेरी माँ भी अद्भुत स्त्री है। बादलों में थेगला लगाने चली है। उसकी मूर्खता पर रोना तो आता ही है, पर हँसी उससे भी अधिक आती है !

मौजी० बादलों में थेगला कैसा ?

धन० जो विपत्ति के बादल वर्षों से मेवाड़ पर छाए हुए थे, इस साल उन में छेद हो गया। सभी आफ़तें एक साथ बरस पड़ीं इस अभागे देश पर। जो देश के नाम पर जान देकर अपनी बेवकूफ़ी से अपने बच्चों को अनाथ बना गए, उन्हें धनदास का द्रव्य कब तक पाल सकता है ?

मौजी० मुझे एक बात मालूम हुई है।

धन० क्या ?

मौजी० अजी ऐसी वैसी बात नहीं। वैसी बात व्यास को भी नहीं सूझ सकती।

धन० अरे कुछ बतावेगा भी ?

मौजी० गणेश जी को भी नहीं सूझ सकती। आपकी तरह वे लंबोदर तो हैं, पर उनकी सवारी चूहे की है। अतः उनका दिमाग़ भी चूहे की तरह चलता है।

धन० सवारी से दिमाग का अंदाज़ा लगाया जाय तो कहना पड़ेगा कि महादेव का दिमाग़ बैल की तरह दौड़ता है।

मौजी०—दौड़ता ही नहीं सींग भी मारता है !

धन० सीसौदिया-वंश भी महादेव जैसे दिमाग़ से काम करता है। भोला ऐसा कि अपने वैरी को भी वरदान दे दे, और जब भस्मासुर उसी को भस्म करने दौड़ा तो भागा-भागा फिरे। क्रोधी ऐसा कि तीसरा नेत्र खोलते ही संपूर्ण विश्व को भस्म करने पर तुल जाय।

मौजी० वाह मेरी बात बीच में रह गई।

धन० हाँ, हाँ तू क्या कहता था ?

मौजी० मैं कहता था कि, पहाड़ों का सृष्टि में जो स्थान और जो उपयोग है, वही पापियों का भी है।

धन० — कैसे ?

मौजी० उन्हीं के भार से तो पृथ्वी रुकी हुई है, नहीं तो सूर्य के खिंचाव से सीधी उसी से जा टकरावे और सब भस्म हो जायँ।

धन० और मोटे आदमियों का भी तो यही उपयोग है।

(माया एक ओर से आती है, दूसरी ओर जाना चाहती है)

धन० हिरनी की तरह भागती क्यों हो ? मैं व्याधा तो हूँ नहीं जो बाण से बेध दूँगा। बाण चलाना जानता तो बहादुर-शाह की सेना को एक ही अग्नि-बाण में समाप्त न कर देता।

(माया का हाथ पकड़ता है)

मौजी० अर्जुन की तरह हवा में किले तो अब भी बाँध सकते हो ?

माया० हवा में क़िले तुम दोनों बाँधते रहो। मुझे बहुत काम है। छोड़ो ! बेचारे अनाथों की सहायता करने जाना है।

धन० माया तो चंचल होती है, पुराणों में लिखा ही है। वह ग़लत हो ही नहीं सकता। पर इतने सवेरे जाने की क्या ज़रूरत है ? अभी बहुत वक्त है। ज़रा ठहर कर चली जाना।

माया० वक्त तुम जैसे अजगरों की तरह पड़ा रहता है क्या ?

धन० वह तो तुम जैसी हिरनियों की तरह उछलता कूदता भागता रहता है।

मौजी० पर वह भागता दिखाई नहीं देता।

माया० जिनकी हिए की फुल हो गई हैं उन्हें दिन और रात

बराबर हैं। इनके लिए न वक्त आता है, न जाता है। (बात बदल कर) तो अच्छा, अब मैं जाऊँ ?

धन० और थैलियाँ भर कर कहाँ ले चलीं। कुछ तो बचने दो, देवी !

माया० कुत्ते की दुम सौ बरस नली में रखी जाने पर भी टेढ़ी की टेढ़ी बनी रहती है। यही हाल तुम्हारी तृष्णा का भी है।

(प्रस्थान)

धन० नदी को बाँधो तो पानी गंदा हो जाय, औरत को बाँधा जाय तो समाज निर्बल हो जाय। बहो माया, तुम बरसात की बाढ़ की तरह स्वच्छन्द रूप में बहो। और तिजोरियों के धन को बालू की तरह बहा ले जाओ ?

मौजी० आपने कुछ सुना है।

धन० क्या ?

मौजी० यही कि हुमायूँ बादशाह बहादुरशाह से युद्ध करने आ रहा है।

धन० सच मेरा तो काम बन गया, अब पाँचों उँगलियाँ घी में हैं।

मौजी० और सर कढ़ाई में।

धन० बस अब पौ बारह है। बस अबकी बार मोटे-मोटे मेंढ़ों की टक्कर है।

मौजी० इससे आपको क्या लाभ ?

धन० एक युद्ध का लाभ तो तेरी माँ ने न उठाने दिया, पर दूसरे का तो मैं अवश्य उठाऊँगा। देश-भक्ति की देश-भक्ति, और पेट-पूजा की पेट-पूजा। एक पंथ दो काज। यश-लाभ भी

और अर्थ-लाभ भी। हुमायूँ की सेना को रसद देने का ठेका मेरे सिवा कौन ले सकता है!

मौनी आप भी खूब हैं, पहले महाराणा को भोग-विलास में लगा कर लूटा, फिर बहादुरशाह से जा मिले, और अब हुमायूँ को गाँठने की तरकीब सोच रहे हैं।

धन० वाह, इसे तो लोग देश का ऋण चुकाना कहेंगे। राजनीति इसी का नाम है और इसके कई पहलू हैं। आह, आज फिर भूली हुई धन स्तुति याद आ रही है, 'पितु-मातु, सहायक, स्वामि, सखा, तुम ही धन-देव हमारे हो।

(कहते-कहते एक ओर को प्रस्थान)

मौनी "पिबन्ति नद्यः स्वयमेव नोदकं
स्वयं न खादन्ति फलानि वृक्षाः।
धाराधरो वर्षति नात्महेतवे
परोपकाराय सतां विभूतयः।'

(श्लोक पढ़ते हुए दूसरी ओर को प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

दूसरा दृश्य

स्थान चंबल के किनारे हुमायूँ का डेरा।

[हुमायूँ, तातारखाँ और हिंदूबेग बैठे हुए बात-चीत कर रहे हैं]

तातारखाँ बादशाह सलामत! बहादुरशाह के खत पर कुछ तो गौर करना चाहिए था। आपने तो उसे पढ़ते ही फाड़

कर फेंक दिया। चारों तरफ आपके दुश्मन बढ़ रहे हैं। लोधी खानदान अभी तक सर उठाए हुए है। शेरखाँ ताकत जमा करता जा रहा है। आपके भाइयों ने आप से किनाराकशी कर ली है। मेरी नाकिस राय में इस मौक़े पर बहादुरशाह को दोस्त बनाया जाता तो बेहतर था। देहली की सल्तनत क़ायम रखने का............

हुमायूँ तातारखाँ! देहली की सल्तनत तो चीज़ ही क्या है, सारी दुनियाँ की सल्तनत से बढ़कर एक सल्तनत है, वह है इनसानियत की सल्तनत, मुहब्बत की सल्तनत! सिकन्दरशाह, जिन्होंने यूनान से हिन्दुस्तान तक अपनी सल्तनत क़ायम की थी, आज कहाँ है? कहाँ है उनकी सल्तनत? कहाँ है उनकी जिंदगी भर की कमाई? लेकिन जिन्होंने दिलों को जीता था वे आज तक जिंदा हैं, वे आज तक हुकूमत करते हैं। उनकी सल्तनत आज तक दुनियाँ के दिल पर इनसानियत की ताकत के सहारे टिकी हुई है। हज़रत मुहम्मद, जिन्होंने इनसान को सारी दुनियाँ से मुहब्बत करने की तालीम दी, आज दिलों के आसमान में सितारे की तरह चमक रहे हैं। अभी तक वह गोया हमें इशारे से जता रहे हैं कि "धन-दौलत का ख़याल छोड़ और इनसानियत की सल्तनत क़ायम कर!"

हिंदूबेग हुज़ूरेआला, सच यह है कि आप बादशाह होते हुए भी फकीर हैं। अगर गुस्ताखी मुआफ हो, बादशाहत अकसर फकीरी का बोझ नहीं सँभाल सकती।

तातारखाँ जिन हज़रत मोहम्मद साहब के इशारों पर चलने का आप दम भरते हैं उन्हीं के चलाए मज़हब को बढ़ाने

की कोशिश बहादुरशाह कर रहे हैं। आपको उनका साथ......

हुमायूँ कैसी खाम-खयाली है। मजहब भी कोई दुनियावी चाल है, जो नाकिस इनसान के फैलाए फैल सकती है। जरा सोचो तो, सूरज की रोशनी को फैलाना क्या आदमी का काम है? क्या चाँदनी को हम मर्जी से छिटका सकते हैं? क्या हवा हमारा हुक्म मानती है? फूलों की खुशबू कहीं हमारे कहने से इधर-उधर जा-आ सकती है? हमारी तदबीरें सब झूठी हैं? जो खुदादाद चीजें हैं वे खुदा की मर्जी से अपने आप दुनियाँ में बँट जाती हैं! दीन-इसलाम हमारी तलवार से नहीं फैल सकता। तलवार से अगर कुछ फैल सकता है, तो मजहबी तअस्सुब, जबरदस्ती, बेइंसाफी और बेईमानी। मजहब को फैलाने के लिए हमें सिर्फ उस पर ईमानदारी से अमल करना चाहिए, दूसरों से जबरदस्ती अमल कराने की कोशिश करना खुदा का काम अपने सर पर लेना है, कुदरत की कारगुजारी में टाँग अड़ाना है। मेरी नजर में तो यह सरासर बेवकूफी है।

तातारखाँ आपकी तरह ऊँची सतह से मैं नहीं सोच पाता। मैं तो इतना ही देखता हूँ और साफ देखता हूँ कि बहादुरशाह मुसलमान है और मेवाड़ के महाराणा काफिर! मेरे सामने दो में से एक को चुनने का सवाल आवे, तो मैं बहादुरशाह ही को चुनूँ। मेरा जी नहीं चाहता कि आपका साथ दूँ। मैंने जो मुनासिब समझा, खिदमत में अदब के साथ अर्ज कर चुका। आगे जो जहाँपनाह की मर्जी। (नेपथ्य में गान सुनाई देता है)

आज खुदा खुद है हैरान।
पिला रहा है तुम्हें तअस्सुब की शराब शैतान।

कहाँ लिखा है, हमें बताओ, खोलो वेद कुरान,
जो न तुम्हारा मज़हब माने लेलो उसकी जान।
मंदिर मसजिद काबा काशी सबमें उसकी शान,
एक दीन सारी दुनियाँ का 'नेकी कर इनसान।'
सब से प्रीति निभाना सीखो बनो न यों हैवान!
भेद रहे हो जिगर खुदा का तुम तलवारें तान!

(गाते-गाते शाहशेख औलिया का प्रवेश)

हुमायूँ खुदा की पाक आवाज़ मेरे कान तक पहुँचाने वाले आप कौन?

शाहशेख एक अदना सा फ़कीर। बादशाह बहादुरशाह का उस्ताद शाहशेख औलिया।

हुमायूँ तो बहादुरशाह ने फिर कोई पैगाम भेजा है। शाहसाहब आपका आना फिजूल होगा। मैं अपना रास्ता नहीं छोड़ सकता।

शाह रास्ता नहीं छोड़ सकते। इसका मतलब! क्या तुम मेवाड़ की हिफ़ाज़त न करोगे? क्या तुम पर बहादुरशाह का जादू चल गया।

हुमायूँ जादू! हाँ जादू मुझ पर चला ज़रूर है, पर बहादुरशाह का नहीं, बहन कर्मवती की राखी के इन धागों का। मैं बहादुरशाह को सज़ा दिये बिना न मानूँगा, शाह साहब आपकी मेहनत फिजूल होगी।

शाह शाबास हुमायूँ। मैं यही जानने आया था। बहादुरशाह मेरा शागिर्द है; मैं उसे जान से ज़्यादा प्यार करता हूँ। इसीलिए चाहता हूँ, कि वह बादशाह बन कर इनसान बने,

अपनी सल्तनत को बढ़ाने के लालच को मजहब के प्यार में न भरे। हुमायूँ तुम्हें बहादुर के सर से शैतान उतारना होगा। शैतान न उतरे तो सर को भी उतारना होगा।

तातारखाँ शाहसाहब! अपने ही शागिर्द का आप बुरा चाहते हैं।

शाह भोले आदमी! तू बुरा-भला क्या जाने। जिसके सर पर ज़ुल्म करने का भूत सवार हो जाय, उसके सर को उतारना ही उसकी सबसे बड़ी भलाई है। हुमायूँ, तुम जिस रफ्तार से जा रहे हो, उससे काम न चलेगा। मेवाड़ का खातमा बिलकुल क़रीब है। किले की दीवार टूट चुकी है। महाराणा क़िले से निकलकर कहीं भाग गए हैं, किले के बचे हुए मुट्ठी भर राजपूत जान पर खेल कर भी कब तक लड़ सकते हैं।

हुमायूँ चित्तौड़ की एक दीवार टूट गई है? महाराणा भाग गए हैं? शाहसाहब! आप यह क्या कहते हैं? मैं खुदा से माँगता हूँ कि चंबल और चित्तौड़ के बीच की सारी ज़मीन ग़ायब हो जाय या आँधी का कोई झोंका मुझी को उड़ा कर चित्तौड़ के क़िले में पहुँचा दे। मेरी सारी फ़ौज चाहे यहीं रह जाय, पर मैं अकेला ही मेवाड़ की मुसीबत में शामिल हो कर मेवाड़ी राजपूतों के साथ मिल कर, मामूली हैसियत से लड़ सकूँ। बहन कर्मवती के कदमों की पाक खाक सर पर लगाने का मौका पा सकूँ और लड़ते हुए जान देकर उसकी राखी का कर्ज़ चुका सकूँ।

शाह मैं भी यही चाहता हूँ कि तुम जल्द चित्तौड़ पहुँचो। तुम्हारे देर करने से हिंदू समझेंगे कि तुमने धोखा दिया, मुसीबत के मौके पर झूठा यकीन दिलाया। इससे सारी

मुसलमान क़ौम बदनाम होगी। भाई बहनों की राखी की इज़्ज़त करना और बहनें भाइयों पर यकीन करना छोड़ देंगी।

(एक सिपाही का प्रवेश)

हुमायूँ क्यों क्या ख़बर लाए हो ?

सिपाही जहाँपनाह ! शेरख़ाँ ने फिर फ़ौज इकट्ठी कर ली है, और बिहार और बंगाल पर कब्ज़ा कर लिया है।

तातारख़ाँ सोचिए, बादशाह सलामत, अब भी मौका है। सोच कर कहिए किस तरफ़ कूच करना है ? बंगाल की तरफ़ या चित्तौड़ की तरफ़। आप सल्तनत की हिफ़ाजत करनी चाहते हैं, या हिंदू बहन के इशारे पर कुर्बान होना।

हुमायूँ तातारख़ाँ, मैंने खूब सोच लिया है। मै राखी का कर्ज़ चुकाने जाऊँगा। सल्तनत जाना चाहती हो, तो जाय ! खुदा को नेकी के रास्ते पर चलने वाले को सज़ा देनी होगी तो देगा। मुझे इसकी फ़िक्र नहीं। फ़िक्र है तो इतनी कि मैं शायद वक़्त पर न पहुँच सकूँगा। तातारख़ाँ ! हिंदूबेग ! मैं एक लमहा भी नहीं खोना चाहता। जाओ, इसी वक़्त कूच का डंका बजाओ। हाँ, एक बात और, महाराणा का पता लगाने और उन्हें हमारे पास ले आने को भी कुछ आदमी भेजने होंगे।

(हिंदूबेग और तातारख़ाँ का प्रस्थान)

शाहशेख शाबास हुमायूँ ! तू ही सच्चा मुसलमान है, तू ही सच्चा इनसान है। तेरी मुसीबतें भी खूबसूरत होंगी, तेरी मौत भी खुदा के ओठों की हँसी की तरह रश्के-जहाँ होगी। जा तुझ पर खुदा की मेहर हो।

(प्रस्थान)

हुमायूँ बहन कर्मवती ! अपने ख़ाविंद के दुश्मन से मदद माँगना, उसे भाई बनाना, उसे अपने यक़ीन का सब से पाक और सब से प्यारा हिस्सा देना, कम फ़राख़दिली नहीं ! बहन का प्यार ! हाय, वह मेरे लिए हमेशा ही सपने की चीज़ रहा है ! ओठ उस अमृत को पीने को तड़पते रहे हैं ! आज जब तुम उनके लिए प्याला भर कर बैठी हो, तो तुम्हारे पास तक पहुँचने को रास्ता नहीं ! अफ़सोस, कहीं मेरे आने के पहले ही........ (प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

तीसरा दृश्य

स्थान कर्मवती का भवन

[कर्मवती अकेली]

कर्मवती सूर्य अस्त हो चला है, और शायद मेवाड़ का सौभाग्य भी ! आकाश में काजल से भी काली घटाएँ छाई हुई हैं। मेवाड़ का भाग्याकाश भी काला हो गया है। किसी कोने में आशा का कोई नक्षत्र दिखाई नहीं देता ! हुमायूँ, तुम भी समय पर न आ सके ! क्या तुम्हारा आश्वासन व्यर्थ था ? क्या तुम भी धार्मिक अंध-विश्वास के अंधकार में भटक गए। नहीं, ऐसा नहीं हो सकता ! राखी में यह शक्ति है कि उसके प्रकाश में संकीर्णता के उलूक रह ही नहीं सकते। वह ध्रुवतारा की भाँति एकटक एक ही दिशा की ओर इंगित करती है बलिपथ की ओर, सर्वस्व-समर्पण की ओर। जिस सैनिक के हाथ में ये धागे बँधे होते हैं, उसके हाथ में स्वयं महाकाल अपना त्रिशूल

दे देते हैं, शक्ति अपना खड्ग दे देती है, इन्द्र अपना वज्र दे देता है, और विष्णु अपना सुदर्शनचक्र ! हुमायूँ ! तुम मुसलमान हो तो क्या हुआ ! क्या तुम मनुष्य नहीं हो ? भाई-बहन का संबन्ध धार्मिक संकीर्णता से बहुत ऊँचा है, वह इस मर्त्य-जगत् का सुन्दरतम पदार्थ है। क्या तुम उसे ठुकरा दोगे ? कोई हृदय में कहता है "नहीं", किंतु जब सब समाप्त ही हो जायगा तब ....

(बाघसिंह, विजयसिंह, भीलराज तथा सामंतों का प्रवेश)

बाघसिंह अब सब समाप्त हो है, भाभी ! मेवाड़ की महाशक्ति भी हमें छोड़ गई। कराला काली का संपूर्ण तेज सहसा जवाहरबाई के रूप में धधक उठा था। हमें क्या पता था कि यह मेवाड़ के शक्ति-दीप की बुझती हुई दशा की अंतिम लौ है। भाभी, जवाहरबाई भी.........

कर्मवती ऐं, जीजी भी........

बाघसिंह हाँ, भाभी, वह भी ! वह बिजली की भाँति अचानक चमकती थी, एक चकाचौंध से विश्व की आँखें झँपा कर, सहस्रों शत्रुओं के अभिमान का मस्तक चूर्ण कर सहसा अन्तर्धान हो गई !

विजयसिंह—राजमाता प्रत्यक्ष दुर्गा की प्रतिमूर्ति थीं। जिन्होंने उनकी संहार-लीला देखी है, वे अपनी वीरता का अभिमान भूल गए हैं। संसार के इतिहास की छाती पर वे अपनी तलवार से खून की स्याही में बलिदान की अमिट लकीर खींच गई हैं। मेवाड़ की सन्तान उस लकीर को देख-देख कर पागल हो उठेगी।

भीलराज वे टूटी हुई दीवार के बीच में चट्टान की तरह खड़ी हो गई थीं। उनकी वीरश्री की एक झलक से बहादुरशाह की आँखें चौंधिया गईं। सहसा तोपखाने का मुँह खुला! तोपों के धुएँ से आकाश भर गया। उनके घोर गर्जन से पहाड़ियाँ हिल उठीं, किंतु राजमाता का हृदय हिमाचल के उच्च शिखर की भाँति अचल था।

कर्मवती धन्य हो जवाहर बाई! तुम्हारी मृत्यु भी अमरता की ईर्ष्या का विषय है।

विजयसिंह जब वे दोनों हाथों से तलवारें घुमाती हुई, भूखी सिंहनी की भाँति शत्रु-सेना पर टूट पड़ीं, तब हमारी सेना के हृदय में न जाने कहाँ से एक अद्भुत उत्साह का समुद्र उमड़ पड़ा। राजपूत 'जय एक लिंग जी की' कह कर भगवान् शंकर के गणों की भाँति शत्रु-सेना पर टूट पड़े। उस समय मानों हम मदिरा पीकर उन्मत्त हो उठे उत्तेजना की मदिरा पीकर। बहादुरशाह की सेना वह विराट सेना वह यूरोपियन तोपखाने पर अभिमान करने वाली सेना कुछ ही देर में भाग निकली, पर उसके साथ हमारा भाग्य भी भाग गया। अचानक एक गोली राजमाता की छाती पर आकर लगी; और वे, जहाँ दुर्ग की दीवार गिरी थी, वहीं गिर पड़ीं।

कर्मवती धन्य हो देवी! धन्य हो। तुमने मेवाड़ की कीर्ति को अमर कर दिया। भाइयो! मनुष्य वही है, जो सुन्दर मृत्यु पाता है। मेवाड़ के पुरुष ही नहीं, स्त्रियाँ भी मरती हैं। मेवाड़ की कीर्ति-पताका कभी नहीं झुक सकती। धन्य हो जवाहरबाई, मेवाड़ की बलिदान-माला में तुम चूड़ामणि की भाँति चमकोगी।

बाघसिंह निश्चय ही।

एक सामंत किन्तु, माता! अब चित्तौड़ की रक्षा कैसे होगी?

भीलराज इस युद्ध में हमारी रही सही सेना भी समाप्त हो गई। हम मुट्ठी भर प्राणी ही बचे हैं।

कर्मवती आह! अब भी हुमायूँ आ पाता ......

बाघसिंह नहीं देवि, अब हमें किसी बाहरी शक्ति की प्रतीक्षा नहीं है। विध्वंस की बिजली आसमान से मेवाड़ पर गिरने के लिए टूट चुकी है। उसे बीच ही में नहीं रोका जा सकता। अब तो राज-बलि ही अन्तिम मार्ग है।

भीलराज राज-बलि! प्रस्ताव तो सुन्दर है, पर महाराणा तो दुर्ग को अनाथ बना कर चले गए। बिना राजा के राज-बलि कैसी?

कर्मवती बाघसिंह जी, उस दिन तुम उदयसिंह के सिर पर राज-मुकुट रखने का आग्रह कर रहे थे, आज उसके उपयुक्त समय आ गया है। कुमार उदयसिंह को पहनाओ छंगी*। उसका मस्तक इसीलिए बना है। भाइयो! मेवाड़ के चरणों पर चढ़ने ही में उस की सार्थकता है।

भीलराज वे अभी बालक हैं, उनकी बलि निष्ठुरता होगी।

बाघसिंह और भाभी, यह भी तो बताओ, क्या तुम मेवाड़ को सदा के लिए परतंत्रता की बेड़ियाँ पहना देना चाहती हो। उसे शत्रु के हाथ से वापिस लेने के लिए भी तो राजवंश का

* मेवाड़ के महाराणा के विशेष राज-चिह्न का नाम 'छंगी' है।

कोई उत्तराधिकारी छोड़ना होगा ! उदयसिंह की रक्षा करनी ही होगी, उसे मैं आज ही बूँदी भेज देता हूँ।

कर्मवती किंतु राज-बलि तो देनी ही होगी।

बाघसिंह वह दी जायगी, भाभी ! (एक सामंत से) जाओ तुम छंगी लेकर आओ।

(सामंत का प्रस्थान)

बाघसिंह० सुनो भाभी, मुझे इसका अभिमान भले ही न रहा हो, पर मेरे शरीर में भी बाप्पा रावल का खून बह रहा है। जो आज तक न हुआ, वह आज होगा। मुझे भी, जीवन के इस सायंकाल में महाराणा बनने का लोभ हुआ है।

कर्मवती महाराणा बनने का लोभ ! इस मरण-त्योहार के अवसर पर यह काँटों का मुकुट धारण करने की साध !

भीलराज वैभव का उपभोग करने के लिए सभी राज-मुकुट सिर पर रखना चाहते हैं, पर अपनी बलि देने का अवसर आने पर विरले ही इसे छूने का साहस कर सकते हैं। धन्य हो बाघसिंह जी, ऐसा त्याग या तो महाराणा लखन जी और उनके राजकुमारों ने किया था, या आप कर रहे हैं।

बाघसिंह० उनका-सा त्याग मैं कहाँ से लाऊँगा, भीलराज ! कराला काली ने उनसे स्वप्न में कहा था—मेवाड़-भूमि भूखी है, राज-बलि की इच्छुक है। उन्होंने अपने हाथ से नित्य एक-एक राजकुमार को छंगी पहना कर बलि-वेदी पर चढ़ा दिया, और स्वयं भी चढ़ गए। उस दृश्य की कल्पना कीजिए जब कुमार की माँ मंगल-द्रव्य हाथ में लेकर, उनकी आरती करके, टीका लगा कर, संग्राम भूमि में प्राण निछावर करने भेजती थीं।

आरती के समय यदि आँखों से एक भी आँसू निकल पड़ता तो व्रत-भंग हो जाता, इसलिए वे भी सब के साथ मंगल-गान में स्वर मिलाती थीं। वह कैसा त्याग था, कैसा दिव्य व्रत था, कैसा कठोर संयम था! स्वयं बलि-वेदी पर चढ़ जाना सरल है, पर अपने हाथ से अपने ११ पुत्रों को, एक साथ भी नहीं, रोज एक-एक करके, मरने के लिए भेजना कितना कठिन है। यह वही जानते हैं, जिन्हें माँ या बाप का हृदय मिला है। जहर के घूँट को एक साथ पी जाना सरल है, पर घूँट-घूँट करके पीना कठिन है! मेरी यह चेष्टा स्वर्गीय लखन जी के त्याग के आगे तुच्छातितुच्छ है।

कर्मवती० जो जहर का प्याला दूसरे के लिए है, उसे आगे बढ़ कर स्वयं पी जाना, उससे भी महत्तर है। तुम्हारा त्याग अपूर्व है, बाघसिंह जी।

बाघसिंह त्याग! कैसा त्याग, भाभी! यह तो तुच्छ प्रायश्चित्त है। पिता के पाप का प्रायश्चित्त। उन्हें राजमुकुट का लोभ हुआ था। और उसके लिए उन्होंने मेवाड़ के विरुद्ध तलवार उठाई थी। यह उसी के आनुवंशिक प्रायश्चित्त का प्रथम अनुष्ठान है।

(सामंत छुंगी लेकर आता है)

बाघसिंह तो भाभी, अपने हाथ से यह छुंगी मुझे पहना दो।

(कर्मवती छुंगी पहनाती है। भीलराज तिलक करता है)

भीलराज महाराणा बाघसिंह की जय।

सब महाराणा बाघसिंह की जय!

बाघसिंह हाँ मैं एक दिन के लिए अवश्य महाराणा कहलाऊँगा।

कर्मवती तुम युग-युग के लिए महाराणा हो। क्षुद्र विलासियों के हज़ारों युग तुम जैसे हुतात्मा के एक क्षण पर निछावर हैं।

बाघसिंह (बात बदल कर) अच्छा, देखो, भाभी, अब मैं महाराणा हूँ। मुझे तुम सब की व्यवस्था करनी होगी।

कर्मवती हमारी व्यवस्था! हम क्षत्राणियों की व्यवस्था! वह तो जवाहर बाई कर गई हैं। हम रणक्षेत्र में लड़ कर प्राण देंगी।

बाघसिंह यह मैं जानता हूँ, भाभी! हम क्षत्राणियों का दूध पी कर ही शेर हुए हैं। किंतु, युद्ध में यदि एक भी क्षत्राणी शत्रु के हाथ पड़ गई तो मेवाड़ की कीर्ति-पताका में अमिट कलंक लग जायगा।

कर्मवती तो हमारे लिए पद्मिनी स्वर्ग से इशारा कर रही हैं। उधर देखो, पश्चिमी क्षितिज पर ऊषा की आग जल रही है। वह बता रही है कि हमारा अंतिम आश्रय जाज्वल्यमान जौहर की ज्वाला है।

बाघसिंह तब हम निस्संदेह निश्चित होकर प्राण दे सकेंगे।

कर्मवती किंतु चाँदखाँ जी की क्या व्यवस्था की जाय। उन्हें न तो मरने देना है, और न शत्रु को सौंपना है।

बाघसिंह उन्हें भी किसी प्रकार सुरक्षित बाहर निकाल दूँगा।

कर्मवती मैं यही चाहती हूँ कि जिन चाँदखाँ जी के लिए

बहादुरशाह आया है, उन्हें वह हर्गिज़ न पा सके और इसी में हमारी जीत है।

बाघसिंह गोवाड़ की सदा जीत है। उसकी हार भी जीत है! चलो, तो अब कल के वीर-व्रत की तैयारी की जाय।

(सब का प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

चौथा दृश्य

स्थान गोवाड़ी भीलों की एक बस्ती के निकट का मार्ग

समय संध्या।

[श्यामा अकेली इकतारे पर गाती हुई एक ओर से आरही है]

अविरत पथ पर चलना री!
गति, जीवन का चरम लक्ष्य है;
विरति, मुक्ति, सब छलना री।
अविरत पथ पर चलना री।

'रण में सहसा 'मरण' महत है,
पर, क्या वह जीवन का 'सत' है?
जीवन तो गति-पथ शाश्वत है
अणु-अणु करके गलना री!
अविरत पथ पर चलना री!

सरल, चिता-शय्या पर सोना,
कठिन दुःख सहना सब खोना,
मिट जाना, पर विकल न होना,

तिल-तिल करके जलना री!
अविरत पथ पर चलना री।

(दूसरी ओर से विजयसिंह का प्रवेश)

विजय माँ! तुम किधर? मैं तो तुम से सदा के लिए विदा लेने आ रहा था।

श्यामा बेटा, विजय, मैं तुम्हीं से मिलने निकली थी। देर तक तेरी बाट देखती रही। जब कुटिया में बैठे-बैठे जी न लगा तब तेरे मार्ग पर चल पड़ी।

विजयसिंह आजकल तुम्हारा जी न जाने कैसा हो रहा है? चारणी माँ तुम्हें बहुत याद किया करती हैं। तुम तो आजकल युद्ध के काम में ज़रा भी मदद नहीं देतीं। उधर आती तक नहीं यह क्या अच्छा है, माँ!

श्यामा बेटा, मैं काफी कर चुकी। युद्ध के लिए इससे अधिक क्या किया जा सकता था? इतने सैनिक एकत्र कर दिए हैं कि उनका रक्त पीने को कई सौ बादशाहों और महाराणाओं की आवश्यकता हो! और फिर जीवन युद्ध से बहुत बड़ा है। तुम लोग युद्ध के बाद ठहर जाना चाहते हो और मैं चलती रहना चाहती हूँ। मुझे अगली मंज़िल की चिंता है, इससे पहली ही मंज़िल पर रुक नहीं रहना चाहती।

विजयसिंह तुम्हारा गान सुनकर ही मुझे यह शंका हुई थी, कि तुम्हें युद्ध से विरक्ति हो गई है, तुम्हारे हृदय की चंडी ने, जिस के आह्वान पर शत-शत वीर अपने मस्तक चढ़ाने को निकल पड़े थे, सहसा शांति का रूप धारण कर लिया है।

श्यामा 'सहसा' न कहो बेटा ! मेरे ये सिद्धांत लंबे अनुभव और गहरे विचार के बाद बने हैं।

विजय अच्छा, क्यों माँ, तुम कल प्रातःकाल जौहर के महाव्रत में सम्मिलित न होगी ?

श्यामा नहीं।

विजयसिंह क्या यह हम लोगों के लिए लज्जा की बात न होगी ? क्या इससे तुम्हारा गौरव कम न होगा ?

श्यामा तुम यदि मुझ जैसी माँ पर लज्जित होते हो तो मैं क्या करूँ ? मेरे पास उसका उपाय नहीं है। किंतु मैं नहीं समझती हूँ कि मरने के लिए भी किसी आयोजन की आवश्यकता है, गौरव की अपेक्षा है। तुम लोग सर्वस्व त्यागी सैनिक हो, पर गौरव पाए बिना तुम एक कदम भी नहीं उठाना चाहते। क्या इसी कीर्ति-लोलुपता के आधार पर तुम दूसरों को उपदेश देने का अधिकार चाहते हो ?

विजय तुम तो नाराज़ हो गई, माँ ! मैंने तो यों ही कहा था। मुझे क्षमा करो।

श्यामा इतने खिन्न मत हो, बेटा ! मैंने केवल तुम्हारे दंभ को......(कुछ ठहर कर) तो तुम जौहर के विषय में जानना चाहते हो ? अच्छा, सुनो। राजमाता के आग्रह पर मैं इतने वर्षों बाद रनवास में गई। राजमाता के प्राणरक्षक और मेवाड़ के त्राता की माँ होने के कारण राजपूतनियों को मेरा सम्मान तो करना पड़ा, पर उनके हृदय में फिर भी एक व्यंग्य छिपा रहा। उनका बड़प्पन, कुलीनता और आचार का दंभ मेरे हृदय पर आघात करने लगा। फिर भी अनमने मन से मैंने

माता कर्मवतीजी पर अपनी जौहर-व्रत में सम्मिलित होने का इच्छा प्रकट कर ही दी। उन्होंने सहर्ष स्वीकृति दे दी, पर मैंने इस संबंध में कई राजपूत-बालाओं को काना-फूसी करते सुना। कहाँ वे और कहाँ एक तुच्छ भीलनी। मेरे साथ वह एक चिता में जलतीं! भला, उनका स्वाभिमान इसे सहन कर सकता था! मैंने सोचा यह जौहर केवल राजपूतनियों के लिए है। सर्व-साधारण का जौहर तो दूसरा ही है।

विजय वह कौन-सा माँ ? तुम तो आज अद्भुत बात कह रही हो।

श्यामा- ग़रीबों का जौहर है, बेटा, प्रति-दिन प्रति-क्षण दुःखों की आग में तिल-तिल करके जलना, अविचलित भाव से कष्टों और संकटों का मुकाबला करना। मैं तो इसे अधिक वीरता का काम समझती हूँ। आग में जल कर मरना या तलवार से कट मरना तो बच्चों का खेल है।

विजय तब क्या तुम यह समझती हो कि कल जो अवशिष्ट मेवाड़ी वीर केसरिया वस्त्र पहन कर मरण का आलिंगन करने निकलेंगे, वे कायर हैं?

श्यामा मैं यह नहीं कहती। पर, इसमें कोई संदेह नहीं कि वे कष्ट सहन से घबराते हैं, दुःख और चिंताओं का हलाहल प्राणों में भर कर भी, अमरता की हँसी हँसते हुए मरण को न्योतना नहीं जानते। वे अपनी माँ-बहनों और बहू-बेटियों को जौहर की ज्वाला में जलाने के बाद ही मरने का साहस कर सकते हैं। तारीफ़ तो उन ग़रीबों की है जो घर में स्त्री बच्चों को दाने-दाने के लिए तरसते छोड़ कर, बीमारों को तड़पते और

करवटें बदलते छोड़ कर बलि-पथ पर जाते हैं और संसार के कल्याण के लिए, दुखियों और पीड़ितों की सेवा में तिल-तिल करके क्षय होते हैं, अपना सर्वस्व लगा देते हैं। मुझे तो यही आदर्श प्रिय है। मैं तो इसी पर आ कर रुक गई हूँ।

विजय तुम्हारी बातों से मुझे विस्मय होता है, माँ! आखिर, तुम क्या करना चाहती हो?

श्यामा मैं? मैं चाहती हूँ ठंढे दिमाग़ से अपने सर्वस्व को कण-कण करके पीड़ितों की सेवा में क्षय करना, मैं चाहती हूँ, अपने हाथों अपने प्राणप्रिय पति और पुत्र को मरण की ज्वाला में झोंक कर जीवित रहना और उनके वियोग के एक-एक क्षण की दारुण कसक को आजीवन सहना, सहते-सहते हँसना, खेलना और काम करना, कलेजे पर पत्थर रख कर दुखियों की सेवा करना, अपने कलेजे को ऐसा बनाना कि वह पत्थर के नीचे दबा रहने ही को वीरता न समझे, बल्कि उसे उठा कर दुनियाँ की उलझनें सुलझाता हुआ जीवन के कंटकमय-पथ पर हँसता खेलता, उछलता कूदता चले। मैं तलवार के वार में या चिता की एक लपटें में जीवन को समाप्त नहीं कर देना चाहती। मेरे विचार में जीवन एक यंत्रणा है, नियति का वज्र लेख है। हमें उसे सहना ही होगा और उस 'सहने' को भूल कर, तुच्छ समझ कर उन लोगों की सेवा-सहायता करनी होगी, जो अधिक पीड़ित हैं, अधिक दुखी हैं।

विजय तुम्हारी बातों से मेरी आत्मा की ध्वनि पर प्रहार होता है, मेरे जीवन की धारणाओं पर आघात पहुँचता है।

श्यामा यह कायरता है, बेटा! प्रत्येक प्राणी प्रत्येक कार्य

के लिए नहीं बना होता । तुम्हारे तरुण रक्त का तकाजा है कि तुम प्रचंड धूमकेतु की तरह बड़े वेग से चमक कर, सारे आकाश को प्रकाश से भर कर, टूट पड़ने को अधिक पसंद करो। तुमसे भग्न कुटी के क्षीण दीपक की तरह तिल-तिल जल कर दीन-दुखियों को निरन्तर धीमा प्रकाश देते रहने की शाश्वत साधना न हो सकेगी । उसके लिए तो मुझ-जैसी भाग्यहीन, हृतसर्वस्व, विताड़ित और पद-दलित विधवा ही उपयुक्त होगी। मुझ में क्या तारुण्य न था ? मैंने क्या वीरांगना की तरह प्राण दे देना न चाहा था ? पर, तब तुम पेट में थे, तुम्हारी अनुमति के बिना तुम्हें अपने साथ कैसे ले मरती ? अब फिर अवसर आया था । तुम्हारी चिंता भी न थी, पर अब मैं वह न रही, अब वे दिन नहीं रहे । और फिर जौहर के लिए स्त्रियों की कमी भी तो नहीं है । १२००० राजपूतनियाँ मौजूद हैं। एक भीलनी न सही। वह उनके साथ शोभा भी तो नहीं देती । उसका स्थान दूसरा है। उसे दूसरा कार्य करना चाहिए।

विजय अब रह ही क्या गया है, माँ। सब तो समाप्त हो गया। मुझे तो मेवाड़ के सामने इस समय युद्ध के सिवा कोई काम ही नजर नहीं आता ।

श्यामा यह तुम्हारी अपनी दृष्टि है और इस सम्बन्ध में सारे मेवाड़ी निर्विवाद रूप से तुम्हारे साथ हैं। पर मैं साफ देख रही हूँ कि इस युद्ध के बाद भी कुछ बच रहेगा। बड़ा ही सुन्दर दृश्य होगा वह । उसे स्वर्ग से देख कर सैनिकों की आत्मा तृप्त हो जायगी। घरों के जला दिए जाने के कारण और पुरुषों के मर-मिटने के कारण असंख्य निरपराध ग्रामीण

बालक-बालिकाएँ और स्त्रियाँ राह की भिखारिनें बन जाएँगी, उनमें अन्न के एक-एक दाने के लिए प्राणघातक कलह होगा। माँ बेटे को खा जाना चाहेगी और भाई बहन को। उन महा-क्षुधित नरकंकालों की क्षुधा के दावानल में सहस्रों सेठ धनदासों का सर्वस्व तिनके की तरह भस्म हो जायगा। उसके बाद पड़ेगी महामारी। माँ बेटे को और भाई बहन को दम तोड़ते देखेगा, पर किसी में इतनी शक्ति न होगी कि दूसरे के मुँह में पानी की दो बूँद डाल दे। उस समय मेरा कार्यक्षेत्र उपस्थित होगा, मेरे कार्य की वास्तविक उपयोगिता सिद्ध होगी।

विजय तुम्हारी इन बातों से मेरा हृदय काँप उठा है, माँ। युद्ध के इस पहलू पर मैंने कभी विचार ही नहीं किया था। वास्तव में बड़ी भीषण स्थिति होगी वह। क्या कहती हो, "तब तुम अपना काम करोगी।" क्या काम करोगी, माँ! जल्द बताओ, साफ साफ बताओ।

श्यामा मैं युद्ध करूँगी, बेटा! दुःख के विरुद्ध, क्षुधा के विरुद्ध, रोगों के विरुद्ध और दीनता के विरुद्ध। जैसे तुम लोग कायरों को भी अपनी वीरवाणी से उत्तेजित करके सैनिक बना लेते हो, वैसे ही मैं भी उन्हीं दीन-दुखियों में से समर्थतर व्यक्तियों को छाँट कर प्रोत्साहित करके, स्वावलंबन और पर-सेवा का पाठ पढ़ा कर अपनी सेना खड़ी कर लूँगी और उन्हीं की सहायता से उनकी दुरवस्था से अपना महायुद्ध प्रारंभ करूँगी।

विजय धन्य हो, माँ! तुम वास्तव में मेवाड़ की अन्नपूर्णा हो। तुम्हें जन्म देकर यह देश कृतार्थ हो गया। तुम रणचंडी

के रूप में महान थीं, पर करुणामयी कल्याणी के रूप में महत्तर हो मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ। मेरी बड़ी इच्छा है कि मैं तुम्हारी सहायता करूँ, पर मेरे अपने सिद्धांत······

श्यामा व्यग्र न हो, बेटा! एकांगी उन्मत्तता बड़ी घातक होती है। जीवन विविधताओं के एकीकरण ही का नाम है। इसमें शांति भी है और युद्ध भी, विध्वंस भी है और सेवा भी। जगन्नियंता जगदीश्वर का चक्र जहाँ अन्याय का संहार करता है, वहाँ उनका वरद-हस्त पीड़ितों की रक्षा भी करता है। युद्ध के सैनिक उन्मत्त होते हैं, वे सेवा के सैनिकों को कायर कह सकते हैं, पर सेवा के सैनिक संयमी होते हैं, वे सेवा को युद्ध से महत्तर मानते हुए भी युद्ध को नितांत निरर्थक और अत्यंत असत्य नहीं कहते। मैंने अपनी रुचि के अनुकूल कार्य चुन लिया है, पर मैं यह नहीं चाहती कि तुम अपने कर्त्तव्य से, अपनी प्रतिज्ञा से विमुख हो। मेरा आशय यह कदापि नहीं है कि सारे सैनिक मेरा अनुकरण करें और मातृभूमि को शत्रु के हाथों में सौंप दें, उसे परतंत्र बन जाने दें, उसका सम्मान धूल में मिल जाने दें। मैं स्वयं दूसरी दिशा में इसलिए जा रही हूँ कि उधर कोई नहीं जा रहा। जाओ, बेटा, तुम अपने पथ पर जाओ, हँसते हुए वीर-व्रत का पालन करो। मेरे भाग्य में वह गौरव नहीं है। अपने पति और पुत्र को खोकर मेरा हृदय दीवाना हो गया है, वह हर ग़रीब के अनाथ बच्चों को अपने बच्चे बना लेना चाहता है, उनकी सेवा में अपने को भुला देना चाहता है।

विजय तुम्हारा व्रत महान् है, माँ! पर मेरा हृदय उससे-

संतुष्ट नहीं होना चाहता। मानो उसका निर्माण ही अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध युद्ध करने के लिए हुआ है। उसी में उसे वास्तविक आनंद मिलता है। मैं तो संसार की शांति-रक्षा के लिए युद्ध को अत्यंत आवश्यक समझता हूँ। मुझे अपने सैनिक होने पर गर्व है, लज्जा नहीं, क्योंकि मैं न्याय के साथ हूँ। वास्तव में हम दोनों का लक्ष्य एक ही है, माँ! तुम यदि पीड़ितों की सेवा करना चाहती हो, तो मैं उनकी सहायता करूँगा। तुम यदि उन्हें अपना स्वास्थ्य वापिस दिलाना चाहती हो, तो मैं उन्हें अपना स्वत्व वापस दिलाने के लिए जान पर खेलना चाहता हूँ। भेद केवल इतना है कि मेरा कार्य जहाँ समाप्त होता है, तुम्हारा कार्य वहाँ प्रारंभ होता है। जो कुछ हो, मैं अपना रास्ता चुन चुका हूँ। तुम्हारे साथ चलने का मोह है, पर मेरी अंतरात्मा अपना निर्णय बदलने को तैयार नहीं। मेरा यह नम्र रुचिभेद है, माँ! और यह तुम्हारे ही दिए हुए विवेक की सृष्टि है। आशा है, तुम इसे सहन करोगी और मुझे रणक्षेत्र में प्राण देने के लिए बड़े प्रेम से विदा दोगी।

श्यामा मैं भी तो तुम्हें स्वतंत्र विचारक देखना चाहती हूँ, बेटा! जाओ, तुम अपने रास्ते पर जाओ। मुझे भी यह सहिष्णुता विरासत में मिली है। यह आज न होती, यदि तुम्हारे नाना मेरी शिक्षा और संस्कृति के लिए विशेष व्यय न करते। यह उन्हीं का वरदान है कि मैं घने कुहरे के बीच भी अपना प्रकाश देख पाती हूँ, नहीं तो कहाँ जीवन की गंभीर गुत्थियाँ और कहाँ मुझ जैसी नीच भीलनी।

विजय अच्छा माँ ! मैं जाता हूँ। शायद इस जन्म में फिर कभी तुम्हारे दर्शन न होंगे।

(चरण छूता है)

श्याम (सिर पर हाथ रख कर) जाओ बेटा ! भगवान् तुम्हें वीरगति दें।

(विजय जाता है। श्यामा की आँखों मे आँसू आ जाते हैं)

श्यामा हाय, हृदय ! तू विकल क्यों होता है ?

(गान)

अविरत पथ पर चलना री,
गति जीवन का चरम लक्ष्य है,
विरति मुक्ति सब छलना री।

(प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

पाँचवाँ दृश्य

स्थान चित्तौड़ दुर्ग का भीतरी भाग

समय प्रातःकाल

[महारानी कर्मवती तथा अन्य राजपूत-रमणियाँ शृंगार करके खड़ी हुई हैं]

कर्मवती अग्नि की पुत्रियो ! क्या मैं विश्वास करूँ कि तुम्हें माँ की गोद में बैठते हुए ज़रा भी भय न लगेगा ? बोलो, वीरांगनाओ ! क्या तुमने मरण को वरण करने का अंतिम निश्चय कर लिया है ? क्या तुम हँसते-हँसते अपनी आहुति देने को तैयार हो ? मैं फिर कहती हूँ, जिसे प्राणों का मोह

हो, जिसे संसार के सुख-दुख को अभी लालसा हो, जिसकी आँखें इतनी बेशर्म हों कि मेवाड़ को परतंत्र अवस्था में देख सकें, वह अब भी लौट जाय।

एक वीरांगना नहीं माँ! यह कैसे हो सकता है? मुर्दों की भाँति जीना कौन पसंद कर सकता है? हमारे स्वामी, पुत्र, बंधु, सभी जननी जन्मभूमि की मान-रक्षा के लिए प्राण दे चुके हैं। जो बचे हैं, वे हमारी ओर से निश्चित होकर मर कर मिटना चाहते हैं। माँ, अब हमारा संसार रह ही कहाँ गया है? विश्वास रखिए, हम हँसते-हँसते जौहर की ज्वाला में प्रवेश कर सकेंगी।

कर्मवती धन्य हो, बहनो! ऐसी ही माताएँ तो विश्वविजयी संतान उत्पन्न करती हैं! आज हमारे जीवन का सबसे महान् त्योहार है। आज अग्नि ही हमारा अंतिम आधार रह गया है। हम अग्नि से उत्पन्न हुई हैं, और उसी से मिलने जा रही हैं। बड़े सौभाग्य से ऐसी मृत्यु मिला करती है। अमरत्व के मार्ग पर जाने वाली बहनो! हम कोई अनोखी बात नहीं कर रहीं। मेवाड़ के पहले जौहर में अग्नि-प्रवेश करने वाली वीरांगनाओं के साथ महारानी पद्मिनी हमारी प्रतीक्षा कर रही हैं। अहा! आज कैसा सुंदर प्रभात है। क्या कभी आसमान इतना लाल हुआ था? मेवाड़-माता के भाल पर आज सौभाग्य का अमर सिंदूर लगा कर हम चली जायँगी। बहनो! प्रस्तुत हो जाओ।

दूसरी वीरांगना हम प्रस्तुत हैं, माँ! हम आज अभिमान से फूली नहीं समातीं। आपके दर्शन-मात्र से हम उन्मत्त हुई जा

रही हैं। क्षत्राणियों के लिए यही तो सबसे सुन्दर मौत है, यही ऊँचा पद है।

कर्मवती प्यारी बहनो! हमारे अवशिष्ट वीर राज-बलि देने जा रहे हैं। उनके प्राणों में अपने कटुम्बियों का मोह शेष न रह जाय, मौत के अतिरिक्त उनका कोई संबंधी न बच रहे, वे निर्मोही होकर, पागल हो कर, युद्ध कर सकें, इसलिए उनके जाने के पूर्व ही हमें अपने अस्तित्व को जौहर की ज्वाला में समाप्त कर देना है। अन्हन्ह! आज हमारे सौभाग्य पर सूर्य भी हँस रहा है। राजस्थान की रेत! आज तू अभिमान से चमक रही है। मेवाड़ के सरोवर! आज तुझ में आनंद की लहरें उठ रही हैं, आज उपवन में वसंत छा रहा है। यही तो समय है गीत गाने का। आज हमारी सुहाग-रात आने वाली है। हाँ, गाओ, बहनो।

(सब गाती हैं)

सजनि, मरण को वरण करो री।
पुलकित अंबर और अवनि है,
आती आमंत्रण की ध्वनि है,
यह सुहाग की रात, सजनि है,
चिता-सेज पर शयन करो री।
सजनि, मरण को वरण करो री।
खड़ी पद्मिनी लेकर माला,
देखो नभ में हुआ उजाला,
हम भी पियें मरण का प्याला,
स्वर्ग मार्ग पर चरण धरो री।
सजनि, मरण को वरण करो री।

मली जली जौहर की ज्वाला,
लेने आया पीहर वाला,
पहन लपटों का ओढ़ दुशाला,

अब उसका अनुसरण करो री।
सजनि, मरण को वरण करो री।

(नेपथ्य में हर-हर महादेव, जय एक लिंग की, जय कराला काली की, जय मेवाड़ भूमि की आदि आवाजें आती हैं)

कर्मवती लो, वे वीर तैयार हो गए हैं। अब हमें शीघ्रता करनी चाहिए। (घुटने टेक कर बैठ जाती हैं, और हाथ जोड़ कर आसमान की ओर देखने लगती है) स्वामी! इतने वर्षों तक आपको प्रतीक्षा करनी पड़ी। क्षमा करो प्राणाधिक! जब आपने स्वर्ग की यात्रा की, तब मेरे पेट में उदयसिंह था। कितनी इच्छा थी सती होने की, पर तुम्हारे उस अंश की रक्षा के उत्तरदायित्व ने जकड़ लिया। आज उसका प्रायश्चित्त कर रही हूँ। स्वामी, तुम रूठे तो नहीं हो? जिस मेवाड़ के लिए तुमने प्राण दिए, उसकी रक्षा मैं न कर सकी! आखिर नारी ही तो हूँ। तुम्हारे शत्रु को भी राखी भेज कर भाई बनाया, पर वह भी समय पर न आ सका। बंगाल से मेवाड़ तक का मार्ग क्या थोड़ा है? क्या तुम मेरे इस कार्य से असंतुष्ट हो? नहीं सच कहते हो, मैंने भूल नहीं की? हाँ, तो अब मैं सुख से मर सकूँगी (उठ कर खड़ी हो जाती है) हाँ अब चलो, बहनो! चिता पर चढ़ने का यही मुहूर्त है। बस वही मरणगीत गाते हुए चलो।

(गान)

सजनि, मरण को वरण करो री।

(गाते-गाते सब का प्रस्थान, बाघसिंह, भीलराज, विजयसिंह तथा अन्य सामंतों का प्रवेश)

बाघसिंह मेवाड़ ! जन्मभूमि मेवाड़ ! तेरी रक्षा कर सकने में हमें सफलता नहीं मिली। आत्म-वेदना से हमारे प्राण जल रहे हैं। मेवाड़ के देवता ! तुम इतनी बलियों से भी प्रसन्न नहीं हुए तो आज इन बचे हुए वीरों की भी आहुति पड़ जाय। यह भी कैसे कहें कि यही अंतिम आहुति है, यही पूर्णाहुति है। मेवाड के खँडहर आज अट्टहास कर रहे हैं, दुर्ग के शिलाखंड मुसकरा रहे हैं, मेवाड़ का खून से तर अंतरतल इस सर्वनाश के समय भी अभिमान से फूला नहीं समाता।

(एकाएक तीव्र प्रकाश होता है, सब उसी ओर देखने लगते हैं)

बाघसिंह देखा, वीरो ! मेवाड़ के गौरव का दृश्य देखा ! जिस देश की माताएँ देश को परतंत्र देखने से पहले जौहर की ज्वाला में जल जाना पसंद करती है, उसे कोई कब तक परतंत्र रख सकता है ? चलीं कर्मवती जी ! तुम अमरलोक को चलीं। बंधुओ, अग्नि-पुत्रो ! इस संसार में अब हमारा कोई नहीं रहा। पत्नी, पुत्र, सगे-संबंधी, सब समाप्त हो गए। अब किसी की चिंता हमें नहीं रही। वे वीर-प्रसविनी माताएँ हँसते हँसते चिता में प्रवेश कर गई। हा-हा-हा ! इस आग को देख कर रोना नहीं आता, हृदय उत्साह से पागल हो उठता है। आज, हम सब में शंकर ने अवतार लिया है। मेवाड़ के अंतिम

योद्धाओ, मेवाड़ के साका* की कसम खाओ कि जब तक साँस रहेगी, तलवार वाला हाथ विश्राम न करेगा।

सब हम मेवाड़ के साका की शपथ खाते हैं कि हम अन्तिम क्षण तक युद्ध करेंगे। अपने जीते जी शत्रु को दुर्ग में प्रवेश न करने देंगे।

बाघसिंह धन्य हो वीरो! अब मेवाड़ की कीर्ति-पताका नीची नहीं होगी। हमारी यह पराजय भी विजय से ऊँची होगी।

भीलराज अवश्य ही! कौन कह सकता है कि महाराणा लखनजी और उनके पुत्रों की आहुतियाँ व्यर्थ गईं? किस में साहस है कि यह कह सके कि महारानी पद्मिनी का वह अग्नि-प्रवेश व्यर्थ गया? उस महान् आहुति के बाद कितने दिन तक मेवाड़ पराधीन रहा?

बाघसिंह मेवाड़ पराधीन रहेगा या स्वाधीन, यह भावी पीढ़ी पर निर्भर है। हमारे सामने तो केवल एक मार्ग है - एक विचार है हम तो केवल एक बात जानते हैं रण में अपनी आहुति देना! फल क्या होगा, यह हम नहीं सोचना चाहते! जिस पर हमारा अधिकार नहीं है, उसका हमें मोह क्यों हो? वीरो, उस चिता की ज्वाला को दंडवत् करो, इसी आग को अपने हृदय में भर कर समर-भूमि में कूद पड़ो।

* साका का अर्थ है सर्वनाश। अलाउद्दीन द्वारा चित्तौड़ विध्वंस और रानी पद्मिनी का जौहर, मेवाड़ का 'पहला साका' कहलाता है। तब से मेवाड़ में 'मेवाड़ के साका' की शपथ खाने की परिपाटी चल पड़ी थी।

चलो, अब चित्तौड़ के फाटक खोल दें। आवे बहादुर भीतर ! करे शासन ! चलावे राज्य ! इन टूटे खँडहरों पर, सूने भवनों पर, जौहर की गर्म भस्म पर ! मनुष्यों पर शासन करने की उसकी साध तो पूरी न हो सकेगी। हाँ, तो करो दंडवत् !

(जिस ओर प्रकाश हो रहा है, उसी ओर दंडवत् करते हैं)

बाघसिंह—(दंडवत् करते हुए) हमें बल दो देवियो ! शक्ति दो माताओ ! साहस दो बहनो ! हम तुम्हारी तरह ही मृत्यु का आलिंगन कर सकें।

(सब उठते हैं)

बाघसिंह हर हर महादेव !

सब हर-हर महादेव !

(सब का प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

छठा दृश्य

स्थान मेवाड़ की एक जंगली पगडण्डी।

[महाराणा विक्रमादित्य थके हुए से, अस्त-व्यस्त अवस्था में खड़े हैं]

विक्रम—कैसा भयानक है, यह जंगली मार्ग ! और इससे भी भयंकर है मेरे जीवन की पगडंडी ! मैं महाराणा सांगा का पुत्र, जिनकी बंकिम भृकुटि से दिल्ली का सिंहासन काँपता था, आज प्राणों के भय से भागता फिरता हूँ। जीवन का ऐसा मोह ! आह, यह जीवन नहीं नरक की यंत्रणा है, प्रत्येक साँस में मौत का निमंत्रण है, रक्त के प्रत्येक बिंदु में मृत्यु का बीज मिला हुआ है। फिर किस आशा से मैं भाग आया ! महाराणा लखनजी और उनके पुत्र आकाश के नक्षत्रों की पंक्ति में बैठ

कर, मुझ पर हँस रहे हैं। कह रहे हैं, 'इसे मरना भी नहीं आया!' वे गोरा बादल की आत्माएँ मुझे शाप दे रही हैं, स्वर्ग में देवी पद्मिनी हँस रही है। उनकी व्यंगमयी मुसकान मानो कह रही है इससे स्त्रियाँ ही अच्छी! अभिशाप, ग्लानि, घृणा और अपयश के बोझ से दबा हुआ जीवन मैं कब तक ढो सकूँगा? मैं मेवाड़ का महाराणा था अब तो राह का भिखारी हूँ पर उससे भी अधिक दुखी हूँ। अब तो चला नहीं जाता। (एक पेड़ के नीचे बैठते हैं) हाय, चित्तौड़ का न जाने क्या हुआ?

(धनदास का प्रवेश)

धन० ओहो! यहाँ तो महाराणा विक्रमादित्य बैठे हुए हैं! तब तो ठीक जगह आ निकला।

विक्रम (खड़े होकर) उपहास न करो, धनदास! महाराणा विक्रमादित्य तो मर गए, उसी दिन मर गए जब उन्होंने चित्तौड़ का दुर्ग छोड़ा, उसी क्षण मर गए जब उन्हें प्राणों का मोह हुआ। अब तो यह एक राह का भिखारी है, एक अभागी निराश्रय व्यक्ति है!

धन० इतने व्यथित हैं आप अपने अस्तित्व से! जान पड़ता है, आप में भी स्त्रीत्व प्रबल हुआ है!

विक्रम स्त्रीत्व प्रबल हुआ है। यह तुम क्या कहते हो?

धन० पश्चात्ताप स्त्रियाँ ही करती हैं, और मरने से स्त्रियाँ ही नहीं डरतीं, खास कर मेवाड़ की। पुरुषों का तो काम ही यह है कि जब तक बने ज़िंदगी की गाड़ी ढकेलें। पति मर जाय तो स्त्री सती हो जाय, किंतु स्त्री मर जाय तो पति दूसरी शादी

कर लें, शादी न करे तो दूसरी गलियाँ झाँके। यही सनातन धर्म है। त्याग तो केवल स्त्रियों के हिस्से की चीज़ है। हम पुरुषों के लिए वह बनाया ही नहीं गया।

विक्रम तुम तो इस विपत्ति के काल में भी दिल्लगी करते हो, धनदास!

धन० दिल्लगी! हः-हः-हः! महाराणा, ईश्वर भी तो दिल्लगी-बाज़ है! दो-दिन पहले तक आप महाराणा थे और आज सड़क पर अकेले बैठे पश्चात्ताप के आँसू गिरा रहे हैं। क्या यह ईश्वर की दिल्लगी नहीं है। हमारे शरीर में जो यह साँस चल रही है, यह जो लोहार की धौंकनी-सी हमारी छाती बार-बार उठती-गिरती है, यह भी तो दिल्लगी ही है न जाने किस दिन बंद हो जाय! जैसे बच्चे फुकनों में हवा भर कर, उन्हें आसमान में उड़ा कर तमाशा देखते रहते हैं, वैसे ही तो विधाता ने हम में हवा भर कर हमें अधर में उड़ा रखा है। ज़मीन पर तो हमारे पैर पड़ते ही नहीं। जिस दिन यह हवा निकल जाती है, सब मिट्टी हो जाता है! महाराणा, यह दुनियाँ ही दिल्लगी है; आँधी, भूकंप, तूफ़ान, महामारी, प्रलय, पतझाड़, ये सभी परमेश्वर की दिल्लगी हैं। मेवाड़ का विध्वंस भी उसकी एक दिल्लगी है।

विक्रम ठीक कहते हो धनदास! पर, यह तो बताओ अभागे चित्तौड़ का क्या हुआ?

धन० अब यह पूछ कर क्या करोगे, महाराणा जी! स्वर्ग की ज्योतियाँ महाज्योति में मिल गईं, और खँडहर पर उल्लुओं की तरह, शत्रु बैठे राज्य कर रहे हैं! मेवाड़ का सर्वस्व स्वाहा हो गया!

विक्रम　क्या कहा ? सर्वस्व स्वाहा हो गया !

धन०　हाँ, महाराणा, सर्व कुछ समाप्त हो गया ! आपकी माताजी ने साक्षात् दुर्गा की तरह युद्ध किया, सैकड़ों को मेवाड़ी तलवार का जौहर दिखा कर, रणभूमि में सुला दिया। उसके बाद स्वयं भी समरभूमि में सो गईं। लो बोलो, सोने को भी उन्हें कहाँ जगह मिली !

विक्रम　धन्य हो, माँ ! मैंने कौन-सा पुण्य किया था जो तुम-सी माँ पाई, और तुमने कौन सा पाप किया था जो मुझ-सा पुत्र पाया ? तुमने शस्त्र ग्रहण कर अपने पुत्र के रिक्त स्थान को भरा ! उसके पाप का प्रायश्चित्त कर दिया। (घुटने टेक कर बैठ जाते हैं) माँ, मुझे क्षमा करो ! अंतिम समय मैं तुम्हारी चरण-रज भी न ले सका ! मै पाखडी, पापी विलासी, कायर, अभागा, अब जो कर ही क्या करूँगा ? माँ, मेरा जीवन तो तुम्हीं थी। माँ का स्नेह विधाता का आशीर्वाद है, वसुधा का सबसे महान् रत्न है। वह अब मुझे कहाँ मिलेगा ? उसकी पूर्ति कोई नही कर सकता ! (उठ खड़े होते हैं) धनदास ! मैं भी मरूँगा ! मै राज-बलि दूँगा !

धन०　जिन्हें मरने की जल्दी थी वे मर गए। कैसे मूर्ख थे, उनसे आपका इंतजार भी न किया गया। और मारने वाले भी कैसे मूर्ख थे कि आपकी प्रतीक्षा किए बिना ही उन्होने सब को मार डाला ! अब समय नही है महाराणा, राज-बलि दी जा चुकी है।

विक्रमादित्य　बिना राजा के राज-बलि कैसी ? छंगी किसने पहनी थी ?

धनदास बाघसिंह जी ने ! माता कर्मवती और १२००० क्षत्राणियाँ जौहर की ज्वाला में भस्म हो गई, और राजपूत अपने सर्वस्व में अपने ही हाथों आग लगा कर, केसरिया वस्त्र पहन कर अंतिम क्षण तक उन्मत्त होकर युद्ध करते हुए, स्वर्ग सिधार गए !

विक्रम धन्य हो बाघसिंह जी, धन्य हो माता कर्मवती ! धन्य हो मेवाड़ के वीरो ! मैंने प्राणों की रक्षा के लिए मेवाड़ के महाराणा का पद छोड़ कर जंगल की शरण ली, और बाघसिंह जी ने प्राणों की आहुति देने के लिए राज-चिह्न धारण किया ! कितना अंतर है दो महाराणाओं मे ! माँ कर्मवती ने मेवाड़ का अपमान अपनी आँखों से न देखने के लिए आग में जल कर प्राण दे दिए और मैंने प्राणों की रक्षा के लिए मेवाड़ को अपमान की ज्वाला मे जलने के लिए छोड़ दिया। धनदास ! मै मरूँगा। युद्ध करता हुआ मरूँगा। मैं बहादुरशाह से युद्ध करूँगा।

धन० अब सेना ही कहाँ है ?

विक्रम मरने जाने वाले को सेना की क्या आवश्यकता ? मैं युद्ध करूँगा। अकेला ही युद्ध करूँगा। मैं मरूँगा। शत्रु-दल का संहार करते हुए वीरों की मौत मरूँगा।

धन० आप मरेंगे तो मेवाड़ का महाराणा कौन होगा ? मैं तो असल में आप को मेवाड़ के सिंहासन पर बैठने का निमंत्रण देने आया था।

विक्रम मेवाड़ के सिंहासन पर ! असंभव बात मुँह पर क्यों लाते हो ?

धन० सेर के लिए सवा सेर सभी जगह मौजूद है। मेवाड़ के सिंहासन पर शत्रु बैठ सके, यह कब संभव है? छः शताब्दियों तक आत्म-बलि चढ़ाते रहने पर भी क्या विधाता के दरबार में मेवाड़ पर सीसौदिया-वंश का अधिकार प्रमाणित नहीं हुआ? चलिए महाराणा, यह जंगल आपके उपयुक्त नही।

विक्रम—कहाँ ले चलना चाहते हो धनदास! मुझे तो केवल नरक में स्थान है।

धन० वहीं जाने की उत्कट साध हो, तो जाना, पर इतनी जल्दी क्या है? आप को याद है, कर्मवती जी ने हुमायूँ को राखी भेजी थी। वह राखी का ऋण चुकाने आया है। मैं उसी का दूत बन कर आपके पास आया हूँ।

विक्रम हुमायूँ के दूत तुम! यह कैसी बात है धनदास?

धन० इसमे आश्चर्य की कौन-सी बात है, महाराणा! आप जानते नही मैं राजनीतिज्ञ जो हूँ! जिधर हवा का रुख, उधर हमारा मुख! यही तो संसार का सबसे बड़ा राजनीतिक सिद्धान्त है। चलिए महाराणा!

विक्रम नहीं धनदास, मेवाड़ का सिंहासन मुझ जैसे कायर के लिए नहीं है।

धन० चलिए महाराणा, मैं हाथ जोड़ता हूँ, चलिए! कोई मनहूस सिंहासन पर बैठ जायगा, तो नाचने-गाने का सारा मजा ही किरकिरा हो जायगा! जिन्हें मरना था मर गये। आप मेवाड़ के महाराणा बनकर, देवियों की चिता की उष्णता पर शांति का लेप कीजिए। नृत्य-गान के ऐसे आयोजन से मेवाड़ के खँडहरों को अपनी क्षति, अपना दुःख भुलाने दीजिए।

जब नरक में जाना होगा तब हम और आप दोनों साथ चलेंगे, वहाँ की बहार भी देखी जायगी।

(हाथ पकड़ कर ले जाता है)

[पट-परिवर्तन]

सातवाँ दृश्य

स्थान चित्तौड़ का राज-महल

[बहादुरशाह, मुल्लूखाँ, पुर्त्तगीज़ सेनाध्यक्ष तथा अन्य मुसलमान सेनापति बैठे हैं]

मुल्लूखाँ- बादशाह सलामत ! फतह की खुशी मे आज जलसा होना चाहिए।

बहादुर फतह ! इसी को फतह कहते हैं ? फतह तो उनकी हुई है, जिनकी राख इस किले को आज भी गरम कर रही है। फतह तो उन राजपूतों की हुई है, जिन्हों ने अपने जीते-जी हमें भीतर न घुसने दिया। मेवाड़ को मैंने फतह किया है ? क्या यही मेवाड़ है ये पत्थर की दीवारे, ये सुनसान खंडहर, यह खून से लथ-पथ जमीन ! एक चिड़िया भी तो ऐसी नही जिससे मै घमंड के साथ कह सकूँ "मैंने तुम्हें सर किया है !"

पुर्त्तगीज़ सेनाध्यक्ष जिनका सर सदियों से न झुका था, जिन्हें यह दावा था कि विधाता के आगे भी सर न झुकावेंगे आपने उन्हीं का सर झुकाया है, बादशाह सलामत !

बहादुर झूठ, सरासर झूठ ! जिस दिन मैंने किले के बाहर से ही आसमान को छूती हुई जौहर की आग की लपटें देखी, उसी दिन मैंने शर्म से अपना सर झुका लिया ! मैंने मन ही

मन मॉ कह कर, मेवाड़ की पाकदामन राजपूतनियों के कदमों की इबादत की । वह जौहर की आग खुदा का नूर थी । वह इनसानियत को नया ही पैगाम देने के लिए चमकी थी ! उसने बता दिया कि मौत भी कितनी शानदार हो सकती है ! मुल्लूखां !

मुल्लूखां जी बादशाह सलामत !

बहादुर अब इन सूने खंडहरों पर मैं कैसे हुकूमत कर सकता हूँ ।

मुल्लूखां इसे फिर से बसाइए, जहॉपनाह !

बहादुर नामुमकिन है मुल्लूखॉ ! जो आग तुमने उस दिन देखी है, जिसने १२००० राजपूतनियों को राख कर दिया, क्या तुम समझते हो, कि वह बुझ गई । नही-नही, वह हर-एक मेवाड़ी के दिल में जल रही है । आतिशी पहाड़ के ऊपर मैं हुकूमत का तख्त नहीं रख सकता । वह रखा ही नही जा सकता !

पुर्तगीज़ सेनाध्यक्ष फौज के ज़ोर पर सब कुछ किया जा सकता है, जनाब !

बहादुर यह ख़याल बिलकुल गलत है । क्या तुमने उन राजपूतों को नही देखा, जो घायल होकर पड़े हुए थे ? हमें किले में दाखिल होते देख कर उन्होंने अपने हाथ से अपने कलेजे में छुरी मार ली ! ऐसे पानीदार लोगों पर हुकूमत करने का सपना देखना, हवा में किले बॉधना है । फौज लोगो को मार ही तो सकती है । पर जो खुद ही मरने को तैयार हैं, उन्हें मार डालने की धमकी से कैसे डराया जा सकता है ? जो मरना जानते हैं, वे गुलाम हो कर रह ही नहीं सकते ।

अलाउद्दीन ने भी तो मेवाड़ को जीता था पर कितने वर्ष यह मुसलमानों के हाथ में रहा ! हम मुसलमान, जो औरतों का बुरके में बंद करके रखते हैं, क्या जानें कि वे जवाहरबाई की तरह तलवार भी चला सकती हैं । राजपूत लोग माँ के दूध के साथ ही बहादुरी के घूँट पीते हैं। ऐसे माँ के लालों पर हुकूमत नहीं की जा सकती । जो धुआँ उस दिन चिता से उठा था क्या वह मिट चुका है ? हरगिज नहीं । वह मेवाड़ के दिल में छा रहा है और किसी दिन कहर की बिजली गिरावेगा ।

मुल्लूखाँ जब आप को ऐसा पछतावा हो रहा है, आपने अपनी इतनी फौज कटा कर चित्तौड़ पर कब्जा ही क्यों किया ? इधर नजर ही क्यों उठाई ?

बहादुर सिर्फ बदला लेने के लिए ।

मुल्लूखाँ क्या वह पूरा हो गया ?

बहादुर- नहीं बिलकुल नहीं ! मेरी मेवाड़ की फतह मेरी जिंदगी की सब से बड़ी हार है । मुबारिकखाँ का बेटा बहादुर शाह चाहता था, राणा साँगा के बेटे उसके कदमों पर नाक रगड़ें । पर कहाँ ? यह कहाँ हुआ ? आसमान में राणा साँगा आज भी हँस रहे है । मेरी बेबसी पर कह-कहा लगा रहे हैं । जिस चाँदखाँ को महाराणा से तलब किया था, वह भी तो मुझे नहीं मिला ! मुझे मिला ही क्या ! सिर्फ इन सूने खँडहरों की बादशाहत ! मुल्लूखाँ, जानते हो खँडहरों का बादशाह कौन होता है ?

मुल्लूखाँ जी हाँ हुजूर, उसका नाम मुझ से मिलता-जुलता

ही है। मगर उस रात के राजा को आप दिन में क्यों याद कर रहे हैं ?

बहादुर　मेरी ज़िंदगी में दिन तो गोया कभी हुआ ही नही। रात के अँधेरे मे ही मैं अब तक चलता रहा हूँ। आज तक सब ग़लत समझता रहा हूँ।

(एक गुप्तचर को प्रवेश)

बहादुर　कहो, क्या खबर लाये हो ?

गुप्तचर　बादशाह सलामत ! हुमायूँ बिलकुल करीब आ गए हैं।

बहादुर　बिलकुल क़रीब !

गुप्त　जी हाँ, दो दिन के अंदर-अंदर आप चित्तौड़ मे उसी तरह घिर जायँगे, जिस तरह मेवाड़ के महाराणा को आपने घेरा था।

बहादुर　मुल्लूखाँ ! देखो महाराणा साँगा की बहादुर औरत आग मे जल कर बहिश्त में चली गई, मगर, असल में अभी तक मेवाड़ पर वही हुकूमत कर रही है। हमें इसी वक्त किले से बाहर निकलना पड़ेगा।

मुल्लूखाँ　क्या क़िले में हम ज्यादा महफूज नहीं हैं ?

बहादुर　हरगिज नहीं ! किले के भीतर रह कर लड़ना खुदकुशी करना है ! रसद बंद हुई और मौत ! यह हमारा मुल्क भी नहीं, जहाँ रसद का इन्तजाम हो सके ! नई फौज भी इस तरह हम नहीं पा सकते। राजपूतों-जैसी बहादुर क़ौम भी अगर हारी है तो सिर्फ़ दीवार की आड़ लेने की वजह से। हम हमेशा बाहर से ताजी फौज मँगा सके, और ये लोग क़िले

में तनहा घिर कर एक-एक कर खतम होते रहे। बहादुरशाह ऐसी बेवकूफ़ी कभी नहीं कर सकता। वह खुले मैदान में लड़ेगा।

पुर्त० सेनाध्यक्ष यूरोपियन तोपखाने के आगे हुमायूँ की एक न चलेगी। बादशाह सलामत, हुमायूँ मेवाड़ को बचाने क्या आए हैं, उन्हें लेने के देने पड़ जायँगे।

बहादुर० सच है, जो मेवाड़ को सर कर सकता है, वह दुनियाँ भर से लड़ सकता है

(सब का प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

आठवाँ दृश्य

स्थान चित्तौड़गढ़ का वह भाग जहाँ पर जौहर की चिता रची गई थी।

[बादशाह हुमायूँ, महाराणा विक्रमादित्य और धनदास का प्रवेश]

हुमायूँ महाराणा साहब ! मेवाड़ पर सीसौदिया-वंश के सिवा दूसरा कोई हुकूमत कर ही नहीं सकता ! सदियों की कुर्बानियाँ फजूल नहीं जा सकती। बेईमान बहादुरशाह ने मेवाड़ की तरफ जो आँख उठाई थी; उसकी सजा उसको मिल गई। उसे गुजरात की सल्तनत से भी हाथ धोना पड़ा।

धन० चौबे जी होने गए थे छब्बे, और रह गए दुबे ! अब फिरंगी पुर्तगीजों की शरण में जाकर जान बचाई है। पर वह जान कब तक खैर मनाएगी ! (कुछ आगे बढ़ कर) लीजिए जहाँपनाह, हम आ गए उसी स्थान पर जहाँ महाराणा

सांगा की वीर-पत्नी मेवाड़ की परम पूज्या, महारानी कर्मवती १२००० क्षत्राणियों के साथ चिता पर चढ़ी थीं। उन पवित्र आत्माओं की भस्म यही है।

हुमायूँ (बैठ कर हाथ जोड़ता हुआ) यह खाक, वतन के लिए जान देने वालों के लिए दुनियाँ की सब से बड़ी नियामत है। यह ख़ाक इनसानियत की आँखों का अंजन है। इसे जो सर आखों पर लगावेगा, उस पर हमेशा खुदा की मेहरबानी का साया रहेगा। (ख़ाक उठा सर पर लगाता है) यह तो अभी तक गरम है।

विक्रम मेवाड़ का दिल भी अभी तक इसी तरह भीतर-ही-भीतर जल रहा है।

हुमायूँ (खड़े हो कर) यह आग दुनियाँ के अज़ाब को जलाने वाली हो। महाराणा! बहन कर्मवती की चिता की यह आग, मज़हबी तअस्सुब की जलन पैदा न करे। बेशक एक मुसलमान ने भारी भूल की थी, मगर उसकी दूसरे मुसलमान ने उसे सज़ा भी तो दे दी। बस, इतना ही काफी है। महाराणा! मुसलमानों से नाराज़ न होना। सारे ही मुसलमान बुरे हैं, यह न समझना। इनसान और शैतान सब जगह होते हैं।

विक्रम इसके उदाहरण तो आप ही हैं, बादशाह सलामत! आप जैसी फराख़दिली किस में हो सकती है? आप का हृदय प्रेम और दया का समुद्र है। आपका उपकार......

हुमायूँ यह आप क्या कहते है, महाराणा! मैंने कोई अहसान नहीं किया। फ़राख़दिली में आप हिंदुओं का हम

मुसलमान मुकाबिला नही कर सकते। जिन राखी के धागों से बहनें भाइयों के सर खरीद लेती हैं, वे हम मुसलमानों को कहाँ नसीब है ? मैं तो हिंदुओं के क़दमों में बैठ कर मुहब्बत करना सीखना चाहता हूँ।

विक्रम हिंदू और मुसलमान ये दोनों ही नाम धोखा हैं हमें अलग करने वाली दीवारें है ! हम सब हिंदुस्तानी हैं !

हुमायूँ हिंदुस्तानी ही नही, इनसान हैं। हमें अब दुनियाँ की हर किस्म की तंगदिली के खिलाफ जिहाद करना चाहिए। हमारा काम भाई के गले पर छुरी चलाना नही भाई को गले लगाना है, भाई को ही नही दुश्मन को भी गले लगाना है। दुनियाँ के हर एक इनसान को अपने दिल को मुहब्बत के दरिया में डुबा लेना है। बहन कर्मवती ने इसी दरिया के दो बड़े हिस्सों हिंदू और मुसलमानों को जिस मुहब्बत के धागे में बाँध दिया है, वह कभी न टूटे, मैं खुदा से यही चाहता हूँ।

विक्रम दोनों ही क़ौमें एक दूसरे पर शासन करने की अभिलाषा छोड़ कर, प्रेम करना चाहें, आपकी तरह प्रेम करना चाहे, तो यह धागा कभी न टूटेगा, बादशाह साहब !

(तातारखाँ का प्रवेश)

हुमायूँ ऐसे घबड़ाए से क्यों हो तातार ? क्या खबर है ?

तातार बादशाह सलामत ! खबर अच्छी नही है। शेरखाँ ने बंगाल और बिहार पर कब्ज़ा कर लिया है, और वह दिल्ली की तरफ बढ़ा चला आ रहा है।

विक्रम- बादशाह साहब ! मै देखता हूँ, मेवाड़ की रक्षा करने की कीमत आप को बहुत ज्यादा देनी पड़ रही है।

हुमायूँ बहन के प्यार की क़ीमत, इन राखी के धागों की कीमत, दुनियाँ की बादशाहत और बहिश्त की सल्तनत से भी बढ़ कर है। महाराणा! मुझे अफ़सोस इसी बात का है, कि मैं ठीक वक्त पर आकर बहन कर्मवती के क़दमों की खाक सर पर न चढ़ा सका। उसकी कमी को उनकी चिता की धूल से पूरी करता हूँ। मैंने मेवाड़ आने में जो देरी की उसकी सजा मुझे अभी भुगतनी है। चलिये महाराणा, आप को बाकायदा मेवाड़ के तख्त पर बैठा कर अपने सर से राखी का कुछ कर्ज उतार लूँ! पूरा कर्ज तो उसी रोज़ उतरेगा जब सारी मुसलिम क़ौम की बहनें हिन्दू भाइयों के हाथों में बेहिचक राखी बाँधने की हिम्मत करेंगी, और सारी हिंदू कौम की बहनें मुसलमान भाइयों के हाथों में दिली मुहब्बत के साथ अपनी पाक राखी बाँधने की मेहरबानी करेंगी, जब हमारी अखों से पापों का मैल धुल जाएगा! चलिए महाराणा, आप को सिंहासन पर बैठा देने के बाद, शेरखाँ से अपनी किस्मत का फैसला करूँगा। हुमायूँ मुसीबतों से डरता नहीं है।

(सब चलने लगते हैं)

हुमायूं ठहरो! एक दफा और बहन की चिता पर अपना सर झुका लूँ! फिर यह सर धड़ पर कायम रहे न रहे! एक मर्तबा और अपनी बहिश्त में बैठी बहन से माफी माँग लूँ। फिर यह ज़बान ही बंद हो जाय तो किसे पता! (चिता के पास घुटने टेक कर हाथ जोड़ कर बैठ जाता है) बहन! मुझे माफ करो, मैं तुम्हारा नालायक भाई हूँ! बहुत कोशिश करने पर भी मैं तुम्हें न बचा सका, पर तुम्हारे मेवाड़ को तुम्हारे दुश्मन के

हाथ से छीन कर, फिर मेवाड़ियों को सौंप जाता हूँ। मुझ पर मुसीबत की बिजली चमक रही है, मुझे ताक़त दो कि मैं उसका मुकाबला कर सकूँ। जिस तरह तुमने राजपूतों को मरना सिखाया है, उसी तरह मुझे भी सिखाओ। जिस तरह तुम हँसती हुई आग में जल सकीं, उसी तरह मुझे भी तकलीफों की आग में जलते रह कर मुसकराना सिखाओ। चाहे जैसी मुसीबत का पहाड़ टूटे, पर मैं हिम्मत न हारूँ और मुहब्बत और इनसानियत को कभी न छोड़ूँ। मगर प्यारी बहन! दिल में एक कसक, बेबसी की एक आह छुपाए लिए जा रहा हूँ! अफसोस! तुम्हारी राखी का कर्ज न चुका पाया!

(चिता पर सिर टेक देता है)

[पटाक्षेप]

नहीं चलते थे। स्वार्थ और अवसर देखकर, उस समय के राग-
होकर क्षत्रिय और वैश्य व्यवहार करते थे, यह नाटककार ने स्पष्
साथ ही साथ मानव के हृदय में हलचल मचाने वाली तथा उ
प्रेरणा और स्फूर्ति देने वाले स्थायी तत्त्वों को भी हमारे सामने ज
है। वदला लेने की वृत्ति मनुष्य को कितना अन्धा कर देती है यह
द्वारा व्यक्त किया है। राखी का मान रखने के लिए मनुष्य कित
अपने सर लेने को तैयार हो जाता है यह हुमायूँ के चरित्र से
शरणागत की रक्षा के लिए एक व्यक्ति नहीं बल्कि पूरी जाति
हो सकती है यह बड़े और छोटे सभी मेवाड़ियों के चरित्र में
जाति और कुल के परपरागत गौरव वाघसिंह और अर्जुनसिंह
है। सर्व-साधारण पर इसका क्या प्रभाव पड़ता है यह भीलराज
में देखने को मिलता है। निराशा के समय जौहर करने वाली
श्यामा को अपने आत्म-वलिदान में शामिल नहीं होने देती।
जाति और वश के अभिमान का असह्य रूप प्रगट होता है। श्य
सुन्दर पात्र भारतीय नाटकों में दूसरा कोई नहीं है। ले
करता है कि जाति-कुलाभिमान की अपेक्षा इनसानियत
युग